चन्दामामा
सितम्बर १९६४
60 NP

सितम्बर १९६४

★

विषय - सूची

★

एक प्रति ६० नये पैसे

वार्षिक चन्दा रु. ७-२०

देना बेंक
में
अपने बच्चों के लिये
अल्पवयस्क बचत खाते
खोलकर उनको बचत करने का
महत्व सिखाइये
१० वर्ष तथा उससे अधिक आयु के बच्चे अपने खुद के नामपर और अपने खुद के हस्ताक्षर से खाते खोल सकते हैं। ब्याज ३%
मुफ़्त
देना बेंक में अल्पवयस्क सेविंग्ज खाता खोलने पर एक आकर्षक सिक्का पेटिका मुफ्त मिलेगी
देवकरण नानजी बैंकिंग कंपनी लिमिटेड
रजिस्टर्ड ऑफिस : देवकरण नानजी बिल्डिंग्स
१७ हॉर्निमेन सर्कल बम्बई-१
१३० से अधिक ऑफिस तथा ४० सेफ डिपोज़िट वॉल्ट
प्रवीणचन्द्र म. गान्धी मैनेजिंग डाइरेक्टर
DB/H/105

चपाती को महज
निगलिये नहीं–
मजे से खाइये!
POLSON'S
PASTEURISED
BUTTER
BUTTER

GEVAB X

गॅवाबॉक्स !

आप भी **गॅवाबॉक्स** कैमरा लीजिये—
अच्छी से अच्छी और सुन्दर चित्र उतारिये।
□ ३ स्पीड, २ ऍपर्चर □ 'ऑल-मॅटल' बॉडी □ कीमत सिर्फ़ रु. ३८/-
गॅवाबॉक्स, स्थानीय ए पी एल डीलर से लीजिये।
भारत में बनाया हुआ।

एलाइड फ़ोटोग्राफ़िक्स लिमिटेड
कस्तूरी बिल्डिंग, जमशेदजी टाटा रोड, बंबई-१।

दिलीप और साथी शिकार में...
दिलीप देखा तुमने ! यह तोता ठीक से नहीं उड़ पा रहा है ।
लगता है बेचारे के पंख में चोट है ! हम उसे बचायेंगे । चलो साथियो, चलो !
मैंने तो उसको, उस तरफ उड़ते देखा !
दिलीप, उसका पता तो हर हालत में लगाना ही है । हम उसे मरने तो नहीं देंगे ।
अब तो अंधेरा भी हो चला ।
अच्छा दिलीप ! कुछ पता है कि किस तरफ लिये चले जा रहे हो ।
हाँ क्यों नहीं ! जरूर साथ में है ।
हमारा प्यारा दिलीप !
देखा, वह रही चिड़िया —वहीं पर । बेचारा गिर गया है ।
हम उसे पाल सकते हैं ।
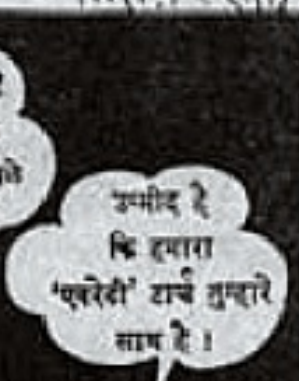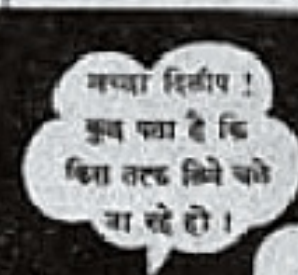
सीखने में देर क्या, सबेर क्या!

तितलियाँ कैसे रहती हैं, यह उसे आज पता चला। जीवन के बारे में वह हर दिन नयी-नयी बातें सीखती है। आप भी उसे सिखायें कि दाँतों व मसूढ़ों का खयाल कैसे रखा जाय। दादी माँ बन जाने पर भी उसके दाँत अच्छे रहेंगे। वह आप की बुद्धि की प्रशंसा करेगी कि सड़े-गले दाँत व मसूढ़ों की बीमारियों से आपने उसे बचा लिया। आज ही बच्चों में सब से अच्छी आदत डालें-उन्हें दाँतों व मसूढ़ों की सेहत के लिए हर रोज फोरहन्स टूथपेस्ट इस्तेमाल करना सिखायें।

अमरीका के दाँत-डाक्टर आर. जे. फोरहन का यह टूथपेस्ट दुनिया में ऐसा एक ही है जिस में मसूढ़ों को मजबूत व अच्छा, दाँतों को चमचमाता सफेद रखने की खास चीजें हैं। आर. जे. फोरहन, डी. डी. एस. की विधि को बतानेवाली "CARE OF THE TEETH & GUMS" रंगीन पुस्तिका (अंग्रेजी में) की मुफ्त प्रति के लिए इस पते पर डाक खर्च के १५ नये पैसे के टिकट भेजें: फोरहन्स डेन्टल एडवाइजरी ब्यूरो, पोस्ट बैग नं. १००३१, बम्बई-१

COUPON

Please send me a copy of
"CARE OF THE TEETH AND GUMS"

Name ....

Address ....

C-1 ....

Forhan's
FOR

चन्दामामा

संचालक: चक्रपाणी

हम पिछले अंक से नेहरू जी की जीवनी दे रहे हैं। कई पाठक पूछ रहे हैं क्या हम उनकी पूरी जीवनी देंगे?

हाँ, जब देनी शुरु की है तो देंगे ही।

श्री नेहरू जी का जीवन राष्ट्र के लिए अनुकरणीय है, इसलिए उनकी जीवनी देना हमारा कर्तव्य है और पढ़ना आपका।

वर्ष: १६ सितम्बर १९६४ अंक: १
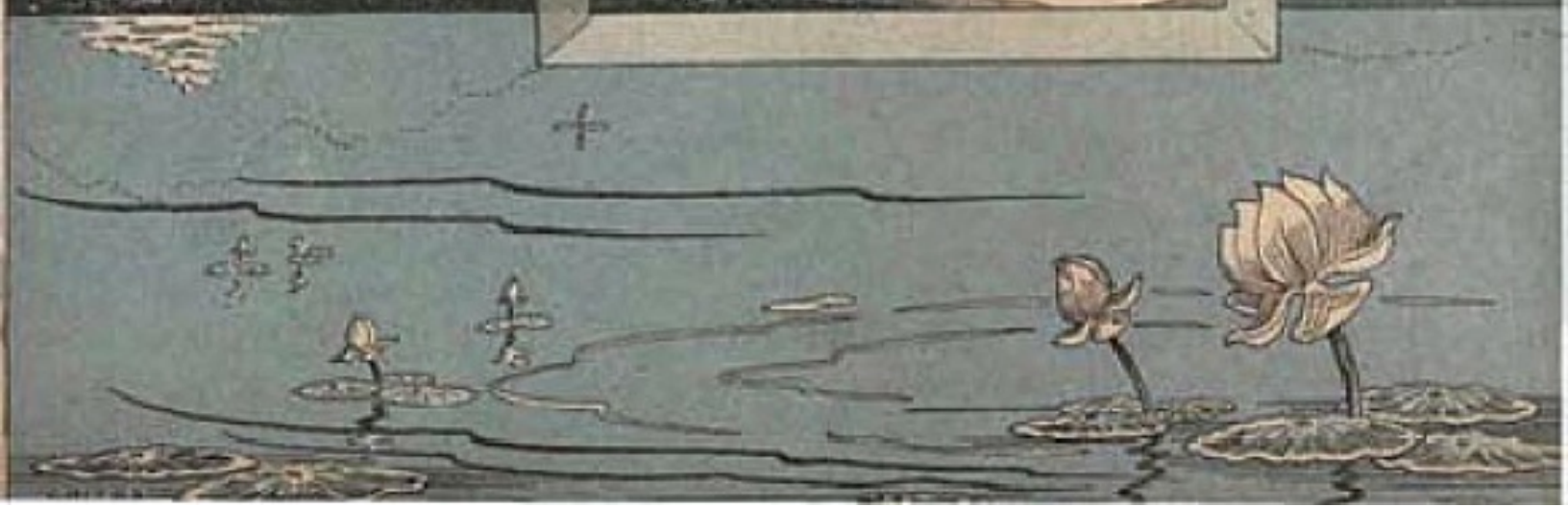
भारत का इतिहास

कृष्णदेवराय ने पोर्चगीज़ों को कुछ सुविधायें दीं, और उनके द्वारा स्वयं कुछ लाभ भी पाया। पोर्चगीज़ों ने, जब मुसल्मानों से गोवा जीत लिया, तो १५१० में पोर्चगीज गवर्नर ने अटकल के पास एक किला बनाने की अनुमति होगी।

एक पोर्चगीज़ यात्री ने कृष्णदेवराय की खूब प्रशंसा की। कहा कि उससे बढ़कर कोई राजा न था। जितना साम्राज्य, जितनी सम्पत्ति और शक्ति उसके पास थी किसी और के पास न थी। कृष्णदेवराय के समय में विजयनगर के साम्राज्य का विस्तार चरम सीमा तक पहुँच गया था। उनके शासन में साहित्य और कलायें भी उच्च दशा पर थीं।

वह स्वयं विष्णुधर्मावलम्बी था। पर उसने हिन्दु धर्म की सभी शाखाओं का आदर किया। पराजित शत्रु राजाओं के प्रति उदारता और वश में आये हुये नगर और प्रजा के प्रति कृपा और दया का बर्ताव किया। वह स्वयं तो कवि था ही, साथ साथ साहित्य प्रिय, और कवि पोषक भी था। उसकी असाधारण युद्ध कला की उसके सामन्त और प्रजा बहुत ही प्रशंसा करते। देवालय और ब्राह्मणों को उन्होंने अनन्त धन दिया।

पर विजयनगर साम्राज्य इतना सब होते हुए, खतरे से मुक्त न था। उत्तरी सीमा पर बलवान शत्रु, इस पर आँख गाड़े हुए थे। दो राज प्रतिनिधियों ने बगावत भी कर दी थी। इनमें एक मधुरा का शासक था। इसने कृष्णदेवराय के जीवित काल में ही (१५२८ नहीं तो १५२९)

विद्रोह किया। परन्तु कृष्णदेवराय के जाने से पहिले ही उसे उचित दण्ड मिल गया।

१५२९-३० में कृष्णदेवराय गुजर गया। उसके सौतेले भाई के हाथ में राज्य आया। मधुरा के शासक और उसके आश्रयदाता तिरुवान्कूर राजा को इसने ही दण्ड दिया। अच्युत राय ने विद्रोह तो शान्त कर दिया था, परन्तु शासन के प्रति उसने आवश्यक ध्यान न दिया। अपने सालों को उसने ऊपर आने दिया। उन्होंने सारा शासन अपने हाथों में ले लिया।

सामन्त यह न देख सके। रामराजू, तिरुमलराजू, वेन्कटरायलु आदि के नेतृत्व में राज प्रतिनिधि उनके प्रतिपक्षी हो गये। उसके बाद, विजयनगर साम्राज्य से शान्ति चली गई।

१५४१ नहीं, तो १५४२ में, अच्युतराय मर गया। उसके बाद उसका लड़का (वेन्कटराजू नहीं तो, प्रथम वेन्कटरायुलु) गद्दी पर आया, उसने ६ महीने ही राज्य किया। उसके बाद अच्युतराय के छोटे भाई का लड़का, सदाशिवराय राजा बना। यह अपने मन्त्री रामरायलु के हाथ में कठपुतली था। रामरायलु समर्थ था। उसने कृष्णदेवराय के समय के बाद के क्षीण राज्य को पुनरुत्थापित करना चाहा।

रामराय की चाल यह थी। दक्खन के सुल्तानों में होने वाले आपसी झगड़ों में, कभी एक बार एक को तो कभी, एक और का साथ देता। यह चाल कुछ दिन तो चली, फिर न चल सकी। बीजापुर पर आक्रमण करने के उद्देश्य से रामराय ने १५४३ में अहमदनगर, गोलकोण्डा, राज्यों से समझौता कर लिया। बीजापुर का

नवाब असदखान अक्लमन्द था। उसने अलग गोलकोन्डा से और विजयनगर से शान्ति सन्धि कर ली और इस तरह, इस समझौते को तोड़ दिया।

दक्खिन के सुल्तान बहुत समय से, विजयनगर से चिढ़े हुए थे। सिवाय बिरार के, बाकी सब दक्खिन की सल्तनतों ने मिलकर १५६५, जनवरी २३ को, राक्षस तंगड़ी के पास विजयनगर से युद्ध किया और उसे परास्त किया। गोलकोन्डा के नवाब हुसेन निज़ाँशाह ने रामरायल को अपने हाथों मार डाला।

मुस्लिम सेना का प्रति साधारण सैनिक, लूटे हुए धन के कारण बड़ा धनी हो गया। तीसरे दिन, शत्रु ने राजधानी में प्रवेश किया। नगर धीमे धीमे नष्ट कर दिया गया। इतने समृद्ध और सम्पन्न नगर का, इस प्रकार नाम शेष हो जाना, कहते हैं, इतिहास में अपूर्व है।

यह युद्ध, जिसे तलिकोट युद्ध कहा जाता है भारत के इतिहास में विशेष स्थान रखता है। इसके साथ दक्षिण भारत में हिन्दुओं का प्रभाव जाता रहा, और तुर्की वंशों का प्रभाव बढ़ गया! १७ वी सदी तक, फिर भी जैसे तैसे यह राज्य चलता रहा। दक्खिन के नवाबों के आपसी झगड़ों के कारण, रामरायलु के छोटे भाई तिरुमलराय का कुछ फायदा हुआ। १६१४ में, दूसरे वेन्कटराय की मृत्यु के बाद, विजयनगर साम्राज्य का पूरी तरह ह्रास हो गया। परन्तु १६१२ में ही, वेन्कटराय की अनुमति पर, राजा ऊँडयर नामक व्यक्ति ने मैसूर में अपना राज्य स्थापित कर लिया था।

प्रह्लाद

[४]

प्रह्लाद ने देवी नामक स्त्री से विवाह किया। उससे आयुष्मान्त, शिवि, विरोचन, कुम्भ, निकुम्भ, पुत्र पैदा हुए। पुराणों में प्रसिद्ध एक शिवि है। परन्तु वह प्रह्लाद का लड़का नहीं था। उषीनर का लड़का था। उसकी माँ देवी न थी। माधवी थी।

नृसिंहमूर्ति द्वारा हिरण्यकश्यपु के मारे जाने के बाद, प्रह्लाद से सम्बन्धित कई घटनायें पुराणों में मिलती हैं।

जब प्रह्लाद राजा था। तब उसमें भी स्वर्ग जीतने की इच्छा हुई। वह देवताओं से युद्ध करके परास्त हो गया। एक और प्रसंग में, वह अपनी विष्णुभक्ति खो बैठा और विष्णु से युद्ध के लिए तैय्यार हो गया। प्रह्लाद ने कभी किसी मुनि का अपमान किया और उसने उसे शाप दे दिया। विष्णु से युद्ध करते वह परास्त हुआ। प्रह्लाद में ज्ञानोदय हुआ। वह फिर विष्णुभक्त हो गया।

च्यवन किसी नदी में स्नान कर रहे थे कि वे किसी भँवर में फँस गये और पाताल चले गये। तब प्रह्लाद ने उनका आदर किया और उनसे, उसने तीर्थयात्रा की महिमा के बारे में जाना। उसने भी तीर्थ देखने की सोची। वह सपरिवार, च्यवन महामुनि के साथ, तीर्थयात्रा पर निकल पड़ा। एक तीर्थ में, उसे तपस्या, करते नर नारायण दिखाई दिये। उनको देखकर प्रह्लाद ने कहा—"ये तो धोखेबाज मुनि मालूम होते हैं। यदि समाधि में मुनि हैं, तो इनको आयुधों से क्या काम?"
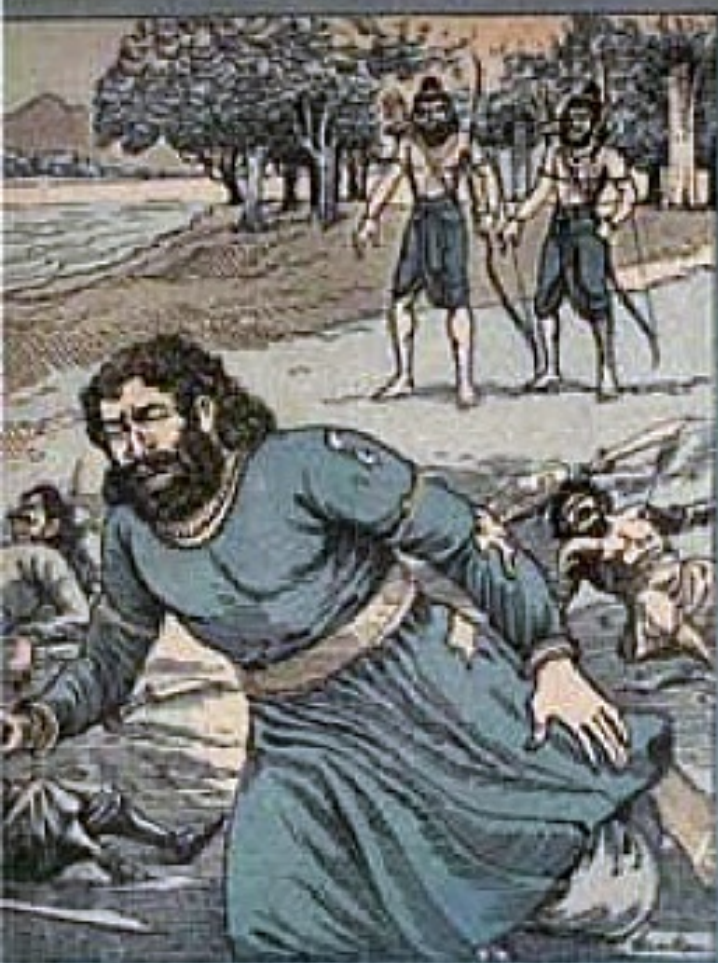
इस बात पर, नरनारायण क्रुद्ध हो गये और उन्होंने प्रह्लाद से युद्ध करके उसे हरा दिया। पराजित प्रह्लाद ने विष्णु से जब प्रार्थना की, तो प्रत्यक्ष होकर उन्होंने कहा—"ये नरनारायण कोई और नहीं है। मेरे ही अंश हैं।"

एक बार प्रह्लाद के लड़के, विरोचन ने, ब्राह्मण अंगीरस के लड़के सुधन्व ने एक ही कन्या से विवाह करना चाहा। "इसी सिलसिले में उनमें अपने अपने गुणों के बारे में झगड़ा हुआ। वे फैसले के लिए प्रह्लाद के पास गये। प्रह्लाद न कह सका कि उनमें कौन अधिक गुणी था।" पर उसने उनको कश्यप के पास जाने की सलाह दी।

"हम तुम्हें न्याय करने के लिए कह रहे हैं, और तुम हमें किसी और के पास भेज रहे हो! राजा हो, तुम निष्पक्ष रूप से बताओ कि हम में कौन अच्छा है। अधर्म यदि किया, तो अवश्य तुम्हारा बुरा होगा।" सुधन्व ने कहा।

यह सुन प्रह्लादने, विरोचन यद्यपि उसका लड़का था, तो भी, उसने न्याय दिया कि सुधन्व उससे अधिक गुणी था।

विरोचन का लड़का बलि था। प्रह्लाद स्वर्ग जीतने गया, और पराजित कर दिया गया। उसके बाद तपस्या करने के लिए जाते समय, उसने बलि का ही राज्याभिषेक किया। एक बार बलि ने अपने बाबा से कहा—"कभी हमारे दैत्य बहुत ही वीर और बलशाली थे। क्यों उनका यों अब बल घट गया है! इसका कारण क्या है!"

प्रह्लाद ने उत्तर दिया—"विष्णु का प्रभाव ही इसका कारण है।"

"क्या विष्णु उतना बड़ा है। क्या उसको जीतनेवाले हमारे में नहीं हैं।" बलि ने पूछा।

"अरे तुमने यह कहा है, इसलिए वह विष्णु जरूर तुम्हारी खबर लेगा।" प्रह्लाद ने गुस्से में कहा। वह ही हुआ।

बलि बड़े सम्राटों में एक था। वह बड़ा धार्मिक था। जो वचन देता था, वह पूरा करता था। इसकी पत्नी का नाम अवशन था। जिससे उसके रत्नमाला नाम की लड़की, बाण, धृतराष्ट्र, निकुम्भनाम, विभीषण, लड़के हुए।

देवताओं ने बलि को शान्तिपूर्वक राज्य नहीं करने दिया, उसे बात बात पर चिढ़ाने, सताने लगे। बलि ने बहुत दिन सत्र किया। फिर उसने इन्द्र लोक पर आक्रमण कर दिया। इन्द्र का मुकाबला करने के लिए इन्द्र भी झिझका, उसने अपने गुरु बृहस्पति से जब सलाह माँगी तो उसने कहा—"तुम बलि को नहीं जीत सकते। इस के लिए तुम्हें विष्णु की सहायता की आवश्यकता है।"

बलि जब तीनों लोकों को जीतकर राज्य कर रहा था, तो देवता, ब्रह्म के पास अपना रोना लेकर गये। ब्रह्मा उनको साथ लेकर विष्णु के पास गया। विष्णु ने देवताओं को वचन दिया, कि वह बलि

को पदभ्रष्ट कर देगा और इस काम के लिए उन्होंने वामनावतार लिया। वह बौने के रूप में कश्यप् और अदिति के घर पैदा हुआ। उपनयन के होते ही, भिक्षा के लिए घूमता घूमता, कुछ दिनों बाद सम्राट बलि के पास आया।

सम्राट ने उस बौने को देखकर कहा—"क्या चाहिए, बताओ...." वामन ने कहा—"तीन गज भूमि।" सम्राट बलि इसके लिए मान गया। पर उसका गुरु शुक्र धोखा ताड़ गया। "इसको तीन गज भूमि मत दो।" परन्तु बलि, चूँकि वचन दे चुका था इसलिए इसके लिए नहीं माना।

बलि सम्राट, वामन की माँगी भूमि धारा द्वारा दे रहा था, तो शुक्र कीड़े के रूप में, उसके कमण्डल में उतर आया। उसने जल की धारा न निकलने दी। वामन ने जब एक तिनके को कमण्डल में घुसेड़ा, तो गुरु की एक आँख जाती रही।

इसके बाद बलि ने वामन को तीन गज भूमि दे डाली। तुरत वामन ने विश्वरूप ग्रहण किया। एक कदम में भूमि, दूसरे कदम में आकाश को ले लिया। फिर पूछा—"तीसरा कदम कहाँ रखूँ?"

"मेरे सिर पर रखो।" बलि ने अपना सिर नीचे किया।

तब प्रह्लाद ने आकर कहा—"यह न्यायशील है। इसको दण्ड मत दो।" वामन ने बलि को मारा नहीं। उसे पाताल लोक भेज दिया। वहाँ, उसे राजा बनाया। उसने घोषणा ही न की जो राक्षस बलि की आज्ञा नहीं मानेंगे, उनको दण्ड मिलेगा, वह स्वयं उसका द्वारपालक भी हो गया।

[३]

[बंगाल में पठानों के आक्रमण को रोकने के लिए दिल्ली के बादशाह अकबर की तरफ से राजा मानसिंह कुछ सेना के साथ आया और बर्धमान नगर के पास उसने छावनी डाल दी। उसका लड़का जगतसिंह शत्रुओं की शक्ति का पता लगाने के लिए मन्दारण प्रान्त में आया। वहाँ वह शैलेश्वरालय में मन्दारण के दुर्गपति बीरेन्द्रसिंह की लड़की तिलोत्तमा और उसके साथ की स्त्री विमला से मिला। तिलोत्तमा और जगतसिंह में प्रथम मिलन में ही प्रेम हो गया।

यदि मुगलों और पठानों में युद्ध हुआ, तो बीरेन्द्रसिंह पठानों की तरफ़ ही आना चाहता था—चूँकि उसे मानसिंह पर क्रोध था। उसके गुरु अभिरामस्वामी ने उसको सलाह दी कि उसका मुगलों की तरफ़ रहना ही श्रेयस्कर था, पर बीरेन्द्र को उसकी यह सलाह उतनी अच्छी नहीं।]

किले से सटकर दामोदर नदी बहती थी। रही थी। सूर्यास्त होने जा रहा था।
उसी तरफ़ किले की ऊँची खिड़की से नदी के उस पार एक ऊँचा तिमंजला मकान
पर बैठी तिलोत्तमा, नदी की भँवरें निहार और बड़े-बड़े पेड़ थे।

श्री बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय

किले के आँगन में मोर, तोते, कोयल आदि सन्तुष्ट हो चिल्ला रहे थे। गरमी थी, पर नदी के ऊपर से ठण्डी बयार आ रही थी।

तिलोत्तमा सोलह वर्ष की लड़की थी। बड़ी सुन्दर थी। उसका शरीर बड़ा कोमल था। न कुछ वह देख रही थी, न सुन ही रही थी, उसका मन कहीं और था। अन्यमनस्क-सी थी।

थोड़ी देर में दासी दीया लाकर कमरे में रखकर चली गई। तिलोत्तमा अपने विचारों को काबू में करके, एक पुस्तक लेकर, उसे पढ़ने दीये के सामने बैठ गयी। वह पुस्तक कादंबरी थी। वह संस्कृत जानती थी। अभिरामस्वामी से उसने सीखी थी।

कुछ देर उसने उसे पढ़ा, फिर उस पुस्तक को एक ओर रखकर, एक और पुस्तक ले ली। यह पुस्तक वासवदत्ता थी। उसे भी अलग रखकर, वह गीत गोविन्द ले आयी। उसे भी उसने फिर रख दिया बिस्तरे पर बैठकर वह कुछ सोचने लगी।

वह जगतसिंह के बारे में सोच रही थी। विमला, अभिरामस्वामी के घर गई और उसने उसे बता दिया कि कैसे शैलेश्वरालय में जगतसिंह से मिली थी। उसने कहा कि उनसे मिले चौदह रोज हो गये थे। फिर जगतसिंह को उस मन्दिर में मिलना है और बताना है कि तिलोत्तमा कौन है।

"अच्छा, आखिर तुमने क्या करने का निश्चय किया है!" अभिरामस्वामी ने पूछा।

"इस विषय में आप आवश्यक सलाह देंगे, यह सोचकर मैं आपके पास आयी हूँ।" विमला ने कहा।

"तो मेरी यही सलाह है कि वह बात पूरी तरह भुला दी जाये।" अभिरामस्वामी ने कहा।

बिमला की आँखों में आँसू आ गये। "तिलोत्तमा को क्या रास्ता दिखाऊँ, उस लड़की का क्या करूँ!"

"बिमला, क्या तिलोत्तमा के मन में प्रेम आदि अंकुरित हो गये हैं!" अभिराम स्वामी ने पूछा।

बिमला कुछ देर तक सोचती रही। फिर उसने कहा—"स्वामी, आपसे क्या कहूँ! पिछले चौदह दिनों से वह लड़की हमेशा खोयी खोयी-सी रहती है। उसका मन, हाव-भाव इस तरह बदल गये हैं कि उसको पहिचानना मुश्किल हो रहा है। उसके हृदय में प्रेम अंकुरित ही नहीं हुआ है, बल्कि वह बढ़ भी रहा है।"

अभिरामस्वामी ने हँसते हुए कहा—"तुम स्त्रियाँ हो ही ऐसी। प्रेम कहते ही इधर-उधर की बातें करने लगती हो, जैसे और कोई चीज़ हो ही न। तिलोत्तमा छोटी उम्र की है। यदि और बातों में पड़ गई, तो जगतसिंह को अवश्य भूल जायेगी।"

बिमला इसके लिए नहीं मानी। इन दो सप्ताहों में, तिलोत्तमा कैसे बिना भोजन और विश्राम के बदल गई थी, कमज़ोर हो गई थी, बिमला ने अभिरामस्वामी को बताया।

सब सुनकर अभिरामस्वामी ने कहा—"स्त्रियों के बारे में नहीं कहा जा सकता! पर क्या किया जाय! वीरेन्द्रसिंह तो बिल्कुल ही नहीं मान रहे हैं।"

"उनके भय के कारण ही मैंने तिलोत्तमा की स्थिति के बारे में कुछ नहीं कहा है। मैंने मानसिंह को भी नहीं बताया है कि

यह कौन है। अब जब कि बीरेन्द्रसिंह मानसिंह से स्नेह करने जा रहा है, तो क्यों नहीं, जगतसिंह को दामाद बना लेते!"

"कैसे कहा जाय कि मानसिंह इस विवाह की स्वीकृति देगा!" अभिरामस्वामी ने पूछा।

"क्यों नहीं स्वीकृति देगा? युवराज जो चाहते हैं!" विमला ने कहा।

"पर तुम यह कैसे सोच सकी जगतसिंह बीरेन्द्रसिंह की लड़की के साथ विवाह करना चाहेगा?" अभिरामस्वामी ने पूछा।

"जाति, कुल, गौरव आदि में दोनों वंश ही समान है। जयधरसिंह के पूर्वज यदु वंशज ही हैं न!"

"यदु वंश में पैदा हुई तिलोत्तमा, क्या मुगलों के बन्धुओं के घर बहू बनेगी!" अभिरामस्वामी ने पूछा।

विमला ने अभिरामस्वामी की रक्षा की नज़र से देखते हुए कहा—"क्यों नहीं होगी! यदु वंश की अपेक्षा कौन-सा हीन वंश है!"

यह सुनते ही अभिरामस्वामी की आँखें अंगारें उगलने लगीं—"पापिन! अभी तुम

अपना दुर्भाग्य नहीं भूल पायी हो ! जाओ, हटो, मेरे सामने से !" उसने उसे डाँटा ।

* * *

जगतसिंह अपने पिता से विदा लेकर, सेना के साथ जब निकल गया, तो उसके साहसिक कार्यों के कारण पठान सेना में तहलका मच गया । पठान हतोत्साह हो गये ।

जगतसिंह ने प्रतिज्ञा कर रखी थी कि पाँच हज़ार सैनिकों को लेकर, वह पचास हज़ार सेनावाले कतलुखान को सुवर्ण रेखा के पार भगा देगा । उस प्रतिज्ञा के पूरा होने की परिस्थिति अभी नहीं आयी थी । परन्तु दो सप्ताह में उसने जो शौर्य और साहस दिखाया, उसके बारे में सुनकर मानसिंह ने कहा—"कोई बात नहीं । मेरा लड़का राजपूतों की पहिले की प्रतिष्ठा रखेगा ।"

जगतसिंह जानता था कि पाँच हज़ार सैनिकों के लिए पचास हज़ार सैनिकों का सामना करना असम्भव था । ऐसा करने से बदनामी और मौत के सिवाय कुछ न हाथ आता । इसलिए उसने युद्ध करने का एक और तरीका ढूँढ निकाला । उसने अपने सेना के बारे में कोई जानकारी

किसी को न होने दी। उसके सैनिक कब, किस समय, किस तरह आक्रमण करेंगे, शत्रुओं को पता नहीं लगता। उसने सेना के छोटे-छोटे दल बनाये। उनको घने जंगल में, गुफाओं में, गढ़ों में, छुपा दिया। उसके बहुत से गुप्तचर थे। वे अपना काम बड़ी होशियारी से करते।

जगतसिंह के इस नये युद्ध तन्त्र से बेशुमार पठान मारे गये। उनकी सेना में भगदौड़ मच गई। यह देख, पठान सेनापति ने, जैसे भी हो, मैदान में आमने सामने युद्ध करने का प्रयत्न किया। पर जगतसिंह ने उसके प्रयत्न सफल न होने दिये। कतलखान के पास खबर पहुँचती रहती कि उसके सैनिक मारे गये थे। हमेशा, क्या शाम, क्या सवेरे, ये बुरी खबरें ही उसे मिलती रहतीं।

आखिर ऐसा समय आ गया, जब कि पठान, अपने किले से बाहर भी न निकल पाये। वे घेर से लिये गये। वहाँ रसद के न होने के कारण, उनकी परिस्थिति विषम होती गई।

यह जानकर कि पठानों के आधीन प्रदेश, फिर उनके हाथ आ रहा था और वहाँ शान्ति स्थापित की जा सकती थी—मानसिंह ने अपने लड़का का अभिनन्दन करते हुए, उसको लिखा कि वह दस हज़ार सैनिक भेज रहा था।

जगतसिंह ने उत्तर में लिखा कि यदि अधिक सेना आ गई, तो अच्छा ही है, पर वह अपने पाँच हज़ार आदमियों के सहारे ही अपनी प्रतिज्ञा पूरी कर सकता था। यह सूचना उसने अपने पिता को दी।

* * *

अभिरामस्वामी से बात करने के अगले दिन शाम, विमला अपने कमरे में बैठी साज़-शृंगार कर रही थी।

कहा जा सकता है कि तीस साल की स्त्री के लिए श्रृंगार की क्या ज़रूरत है। पर जिनके मन में यौवन है, वे आयु की परवाह किये बगैर ही श्रृंगार कर सकती हैं। कई बीस वर्ष की उम्र में ही मानसिक दृष्टि से बूढ़े हो जाते हैं। विमला मन से युवती थी, साज़-श्रृंगार करती कुछ कुछ गुनगुनाती भी जाती थी, बीच-बीच में उठती भी।

अलंकरण समाप्त करके, वह जगतसिंह की दी हुई माला पहिनकर, सीधे तिलोत्तमा के कमरे में गई।

तिलोत्तमा उसे देखकर चकित हुई, उसने पूछा—"आज क्यों इतनी सजी-धजी हो विमला? सच बताओ। कहाँ जा रही हो?"

"बहुत दूर जाना है।" विमला ने कहा।

"सच बताओ, कहाँ जा रही हो?" तिलोत्तमा ने पूछा।

विमला उसका हाथ पकड़कर, खिड़की के पास ले गयी। उसके कान में कहा—"मैं शैलेश्वर मन्दिर जा रही हूँ, वहाँ एक राजपूत से मिलना है।"

यह सुनते ही तिलोत्तमा को रोमान्च हुआ। उसने कुछ न कहा।

"अभिरामस्वामी से मैंने इस बारे में कहा। उनका ख्याल है कि तुम्हारा और जगतसिंह का विवाह असम्भव है। तुम्हारे पिता इसके लिए बिल्कुल न मानेंगे। यदि तुमने अनजाने उनके सामने यह बात कही, तो समझ लो कि बेड़ा गर्क हो जायेगा।" विमला ने कहा।

तिलोत्तमा ने सिर झुकाकर, अस्पष्ट कँठ से उनको कहा—"परन्तु क्यों? परन्तु क्यों?"

"क्यों, क्या? मैंने वचन दिया था कि आज मैं उससे मिलूँगी और बताऊँगी

कि तुम कौन हो! इतने भर से क्या होता है! जो कुछ मुझे कहना है, मैं कह दूँगी, फिर उसकी मर्जी, चाहे, जो कुछ करे अगर उसे सचमुच तुम पर प्रेम होगा, उस हालत में........"

विमला अभी कह ही रही थी कि तिलोत्तमा ने उसके मुख पर हाथ रखकर कहा—"तुम्हारी बातें सुनकर मुझे शर्म आ रही है। जाना ही चाहती हो, तो तुम चाहे, जहाँ जाओ। परन्तु मेरे बारे में किसी को कुछ कहने की जरूरत नहीं है।"

"ऐसी ही बात है, तो क्यों इस कच्ची उम्र में प्रेम समुद्र में पड़े!" विमला ने हँसते हुए कहा।

"जा, जा, मैं तेरी बात बिल्कुल नहीं सुनूँगी...." तिलोत्तमा ने कहा।

"तो, फिर मैं भी नहीं जाऊँगी।" विमला ने कहा।

तिलोत्तमा ने सिर झुकाकर कहा—"जाओ।" विमला ने ज़ोर से हँसकर कहा—"हाँ, तो जा रही हूँ। जब तक मैं वापिस न आ जाऊँ, तब तक तुम सोना न।"

तिलोत्तमा यों हँसी जैसे कह रही हो, तभी न सोऊँगी, जब नींद आयेगी। विमला ने एक हाथ तिलोत्तमा के कन्धे पर रखा, दूसरे से उसकी ठोड़ी पकड़कर, उसको चूम लिया।

तिलोत्तमा ने देखा कि जाते समय विमला की आँखों में आँसू थे।

विमला, तिलोत्तमा के कमरे से जा रही थी कि आसमानी ने आकर कहा—"बाबू, आपको बुला रहे हैं!" [अभी है]

शापग्रस्त

विक्रमार्क ने हठ न छोड़ा, वह फिर पेड़ के पास गया, पेड़ पर से शव को उतारकर कन्धे पर डाल, हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा, तुम्हें यों कष्ट उठाता देख, लगता है, जैसे तुम कोई शापग्रस्त हो। पर तुम साधारण शापग्रस्त व्यक्ति से नहीं लगते, परन्तु मत्स्य राजा की लड़की मुक्तामयी की तरह, लगता है स्वयं शाप मोल ले बैठे हो। ताकि तुम्हें थकान न मालूम हो, मैं उस राजकुमारी मुक्तामयी की कहानी सुनाता हूँ, सुनो।" उसने यों कहानी सुनानी शुरु की।

मत्स्यलोक की राजकुमारी का नाम मुक्तामयी था। सौन्दर्य में उसके बराबर कोई न था। उसके सौन्दर्य से आकृष्ट होकर फणीमुख नामक नाग ने उससे विवाह

करना चाहा। पर स्वयं वह बड़ा कुरूपी था। इसलिए मुक्तामयी ने उसको देखना भी न चाहा।

"हमारी लड़की तुम से शादी नहीं करेगी। इसलिए तुम इधर उधर की आशायें छोड़ दो।" मुक्तामयी के माँ बाप ने साफ़ साफ़ फणीमुख से कहा।

परन्तु फणीमुख की इच्छा इससे कम बिल्कुल न हुई, बल्कि और बढ़ गई, उसने मुक्तामयी का अपहरण करने की भी ठानी। पर वह अपने इस प्रयत्न में सफल न हुआ, यही नहीं सब जलचरों को यह मालूम भी हो गया। इसके बाद फणीमुख, मत्स्यलोक में शान्ति से न रह सका। वह चम्पा सरोवर से भूमि पर आया और सरोवर के पास ही एक बिल में रहने लगा।

फणीमुख जब मत्स्यलोक छोड़कर चला गया, तो मुक्तामयी का कुछ ढाढ़स हुआ। वह तब तक इसी डर में थी कि कब किस तरफ़ से फणीमुख आता है और उसे उठा ले जाता है। वह अब स्वेच्छापूर्वक घूमने फिरने लगी।

इस तरह घूमते घूमते वह एक दिन चम्पा सरोवर के मार्ग से भूलोक में आयी और चम्पा वन में चली गई। उसने इससे पहिले कभी भूलोक नहीं देखा था। इसलिए चम्पा वन के दृश्य उसे बड़े विचित्र और सुन्दर जान पड़े।

मुक्तामयी इन दृश्यों को देख रही थी कि बिल में से फणीमुख आया और उसके पास आकर बोला—"क्या मेरेलिए आयी हो! आओ, मुझ से विवाह करके यहीं रह जाओ।"

फणीमुख के दीखते ही, मुक्तामयी ज़ोर से चिल्लायी और चम्पा ने सरोवर में कूदना चाहा, पर फणीमुख ने उसे सरोवर के पास

जाने न दिया। मुक्तामयी भय से कांपती जाती थी और जोर से भागती जाती थी।

उसका चिल्लाना सुनकर उस देश का युवराजा, जगन्धर, उस तरफ़ भागा भागा आया। उसने अत्यन्त सुन्दर मुक्तामयी और उसका पीछा करते फणीमुख को देखा। वह शिकार के लिए उस तरफ़ आया था पर जानवरों के बदले उसने इन दोनों को देखा।

मुक्तामयी उसके पास भागी भागी आयी—"यह दुष्ट मेरा पीछा कर रहा है। इसे मारकर मेरी रक्षा कीजिये।"

साहसी जगन्धर फणीमुख से भिड़ पड़ा और उसके सिर पर जोर से एक चोट मारी। यह मौका देख मुक्तामयी सरोवर में कूदी और मुँह ऊपर करके, जो कुछ हो रहा था, देखने लगी।

जगन्धर की चोट खाकर, प्राण छोड़ते हुए फणीमुख ने कहा—"तुम मेरी पत्नी होने के लिए तो मानी ही न, बल्कि तुम मेरी जगह मुझे चिढ़ाने के लिए आयी। यही नहीं, तुमने मुझे इस राजकुमार के हाथ मरवाया भी, जब तुम इसके कारण कभी भूमि पर पैर रखोगी, तो पत्थर हो जाओगी।" मुक्तामयी को शाप देकर फणीमुख मर गया।

यह सुनते ही मुक्तामयी ने सरोवर में डुबकी लगाई और सीधे अपने लोक में चली गई।

जगन्धर ने यह घटना नहीं देखी। फणीमुख को मारते ही उसके लोग उसके पास आये। उसकी तलवार में खून देखकर उन्होंने सोचा कि वह घायल हो गया होगा।

"मुझे तो कोई घाव नहीं लगा है, पहिले यह देखना है कि मुझ से चोट खाकर नागदेव कहाँ गया है!" उसने कहा।

फणीमुख तब तक प्राण छोड़ चुका था। यह जानकर, जगन्धर इधर उधर देखने लगा कि वह सुन्दरी कहाँ गई, जिसकी उसने रक्षा की थी। उसे वह कहीं न दिखाई दी। जब उसने सरोवर के पास जाकर उसमें देखा, तो मुक्तामयी बिजली की तरह एक क्षण चमकी और फिर अदृश्य हो गई।

राजकुमार के लोग यह न जान सके कि वह किसे खोज रहा था। उनमें से किसी ने मुक्तामयी को न देखा था। उसके बारे में जगन्धर उनसे कहना भी न चाहता था। इसलिए उसे उनके साथ जाना पड़ा।

जगन्धर आने को तो घर चला आया था, पर उसका मन चम्पा सरोवर पर ही था। वह मुक्तामयी का सौन्दर्य न भूल पा रहा था। दो तीन दिन, उसे दो तीन युग की तरह लगे। बिना उसे देखे, उसे लगा कि वह जीवित न रह सकेगा।

एक दिन वह बिना किसी से कहे, चम्पा वन के पास गया। बहुत देर तक चम्पा सरोवर के पास इसलिए प्रतीक्षा करता रहा कि मुक्तामयी ऊपर आयेगी।

उसे सरोवर के किनारे एक मणि दिखाई दी। वह मणि फणीमुख के सिर से गिरी थी। जगन्धर के उस मणि के लेते ही, उसको जल का भय जाता रहा। वह झट चम्पा सरोवर में कूद पड़ा। उसे ऐसा लगा जैसे पानी उसे रास्ता दे रहा हो। बिना किसी कष्ट के, आसानी से वह मत्स्यलोक में पहुँचा।

इस बीच मुक्तामयी की भी वही हालत थी, जो जगन्धर की थी। जब से उसको जगन्धर ने बचाया था, तब से वह उससे प्रेम करने लगी थी। यदि फणीमुख ने शाप न दिया होता, तो वह अपना लोक छोड़कर माँ बाप को छोड़कर जगन्धर की पत्नी बनकर उसके पास ही रहती। परन्तु अब वह अपने प्रेमी को देख भी न सकती थी। वह भूमि पर कदम ही न रख सकती थी। जगन्धर उसके लोक में आ नहीं सकता था। इसलिए वह बिना किसी से कुछ कहे अपने भग्न प्रेम को लेकर, मन ही मन दुखी रहने लगी।

तभी मुक्तामयी को मालूम हुआ कि कोई मानव उसके लोक में आया था। वह भागी भागी उसके पास गई और इस तरह

सन्तुष्ट हुई जैसे उसकी सारी प्रार्थनायें पूरी हो गई हों। उसको वह अपने घर ले गई।

जब उन दोनों ने अपने प्रेम को व्यक्त किया, तो मुक्तामयी के माँ बाप भी, उसके विवाह के लिए सहर्ष मान गये। वे अपनी लड़की को उसके साथ भूलोक जाने के लिए भी मान गये। परन्तु मुक्तामयी ने साफ़ साफ़ कह दिया कि वह किसी भी हालत में भूमि पर नहीं जायेगी।

"तुम से अधिक प्रिय मेरे लिए भूलोक में कोई नहीं है। मैं यहीं रह जाऊँगा।" जगन्धर ने कहा।

यह सुन मुक्तामयी के माँ बाप और भी सन्तुष्ट हुए।

जगन्धर ने पाँच वर्ष तक मत्स्यलोक में जिन सुखों का अनुभव किया जा सकता था, उनका आनन्द लिया। उसके एक लड़का और लड़की भी हुई।

इतने समय बाद जगन्धर ने अपने लोक में जाकर, अपने बन्धुमित्रों को देखना चाहा। वह अपनी पत्नी से कहकर, मणि के सहारे, चम्पा सरोवर के मार्ग से भूलोक में जाकर, अपने घर चला गया।

उसके घर में विषम परिस्थिति थी। जब जगन्धर न दिखाई दिया, तो उसके लिए बहुत खोज हुई। कोई यह न बता सका, कि वह किस तरफ़ गया था और क्या हो गया था।

तब से जगन्धर का पिता इतना चिन्तित हो गया कि उसने चारपाई पकड़ ली। कई वैद्यों ने तरह तरह की चिकित्सा की, पर उसकी बीमारी न गई। उसकी हालत अब और तब की थी। उसके मरने पर सिंहासन का उत्तराधिकारी भी न था।

उस हालत में जगन्धर वापिस आया। लड़के को देखते ही, राजा के प्राण में

आ गये। जगन्धर की कहानी सुनने के बाद राजा ने कहा, जो हो गया सो हो गया, अब इस लोक की किसी स्त्री से विवाह करके, राज्याभिषेक करके राज्य करने से उसके मन को शान्ति मिलेगी।

"इस जन्म में मुक्तामयी ही मेरी एक पत्नी है। मैं किसी और से शादी नहीं करूँगा।" जगन्धर ने अपने पिता से कहा।

"तो उसे लाकर, आराम से राज्य करो" बूढ़े राजा ने कहा।

मुक्तामयी ने पहिले ही कह दिया था कि वह भूलोक नहीं आना चाहती थी। परन्तु जगन्धर ने सोचा कि परिस्थितिवश वह अपना अभिप्राय बदल ले। वह मर्त्यलोक गया, जो कुछ गुजरा था, उसने अपनी पत्नी को बताया। उसने उसे साथ आने के लिए कहा।

मुक्तामयी ने कहा—"तो जैसा कि आपके पिता ने कहा है, वैसे ही आप एक राजकुमारी से विवाह करके, उससे गृहस्थी निभाते राज्य कीजिये।"

"यह मेरे लिए सम्भव नहीं है। मैं सिवाय तुम्हारे किसी और से प्रेम नहीं कर सकती, विवाह नहीं कर सकता। क्यों तुमने जिद पकड़ रखी है कि तुम भूलोक में पैर नहीं रखोगी!" जगन्धर ने पूछा।

मुक्तामयी के माँ बाप ने भी जगन्धर की बात का समर्थन किया।

"तो चलिए" मुक्तामयी जगन्धर के साथ भूलोक की ओर निकल पड़ी। उसका चम्पा सरोवर के बाहर पैर रखना था कि फणीमुख का शाप लगा और वह पत्थर हो गई।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा—"राजा, मुझे एक सन्देह है। मुक्तामयी,

क्यों जान बूझकर शाप का शिकार हो गई! यदि वह अपने शाप के बारे में कहती, तो जगन्धर उसकी वह दुःस्थिति नहीं न होने देता। यदि तुमने इन सन्देहों का, जान बूझकर उत्तर न दिया, तो तुम्हारा सिर टुकड़े टुकड़े हो जायेगा।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा—"मुक्तामयी के इस व्यवहार के दो कारण हैं। उसने जगन्धर के प्रेम को अति पवित्र समझा। जब उसने किसी और से विवाह करने से इनकार कर दिया था, तो उससे ही पता लगता था कि उसका प्रेम कितना गहरा था। उस हालत में यदि वह अपने शाप के बारे में कहती, तो जगन्धर अपने राज्य, कर्तव्य, सब छोड़ छाड़कर, मर्त्यलोक में ही रह जाता। पर उससे उसके प्रेम को कुछ धक्का पहुँचता, उसे इसकी भी ठेस रहती कि प्रेम के कारण, उसने अपने कर्तव्य की उपेक्षा कर दी थी। यदि उसको अपना कर्तव्य निभाना था और यदि उसका प्रेम इसमें अड़चन था, तो सिवाय शाप के शिकार होने के और कोई रास्ता न था। यह एक कारण है। एक और कारण यह भी है, मुक्तामयी ने पाँच वर्ष तक अपने पति के प्रेम का आस्वादन किया था। उसके दो बच्चे भी थे। इसके बाद अगर वह हज़ार वर्ष भी जगन्धर के साथ गृहस्थी करती, तो कोई और नया अनुभव न पाती।" इसलिए भी वह शापग्रस्त होने को मान गई थी।

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही, बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और फिर पेड़ के ऊपर जा बैठा। (कल्पित)

पाप विमुक्ति

कृतयुग में भूमि पर बड़े बड़े जंगल थे। उनमें ऋषि और दस्यु रहा करते थे। दस्यु चोर थे। उन चोरों में अच्छा विदस्यु था। वह यात्रियों को लूटा करता। ऋषियों के पास चूँकि कुछ नहीं होता था इसलिए चोर प्रायः उनके पास नहीं जाते।

ऋषियों में सुमनाक नाम का एक था। इसने इन्द्र के बारे में अनेक ऋचायें बनाईं और उनसे इन्द्र की स्तुति किया करता। क्योंकि सुमनाक अकेला ही यों स्तुति कर रहा था इसलिए इन्द्र को उस पर बड़ा प्रेम था। इन्द्र वर्ष में एक बार आता और उसका कुशल क्षेम पूछकर चला जाता।

इन्द्र ने सुमनाक को एक वर देने के उद्देश्य से उससे पूछा—"क्या वर चाहते हो, माँगो।" पर सुमनाक ने अपने लिए कुछ न माँगकर कहा—"यदि तुम मेरा कुछ कल्याण करना चाहते हो, तो सारे संसार का करो।"

सुमनाक के यह कहने पर इन्द्र का उसके प्रति आदर और भी बढ़ गया। वह वर्ष में दो बार इन्द्र के पास आता और उससे ऋचायें पढ़वाकर चला जाता।

सुमनाक एक जगह स्थिर न रहता। कहीं उसका आश्रम न था। अपनी ऋचाओं द्वारा इन्द्र की महिमा सारे संसार में गाता रहता। जब वह उन ऋचाओं को ज़ोर से गाता, तो इन्द्र जान जाता कि वह कहाँ था।

एक बार जब इन्द्र सुमनाक को देखने आया, तो साथ वह उसके प्रति अपने आदर के चिन्ह के रूप में एक किरीट

और रत्नहार भी लाया। उसे पहिनने के लिए उसे बाध्य करके चला गया। सुमनाक ने उन्हें पहिन लिया, उन्हीं के कारण उस पर आपत्ति भी आयी।

जंगल में घूमता घूमता सुमनाक उस प्रान्त में आया जहाँ विदस्यु रहा करता था। उसके पास किरीट और रत्नहार देखकर, उसने उनको ले लिया। जो चीज़ें इन्द्र ने प्रेम से दी थीं वह उनको देखते देखते कैसे दे देता? इसलिए उसने उसको रोका। तब विदस्यु ने उसे मार दिया।

सुमनाक ने प्राण छोड़ते हुए विदस्यु से कहा—"मुझे मारने के पाप से विमुक्त होने के लिए हमेशा सच बोलो।"

यह सुन विदस्यु को आश्चर्य हुआ। "यह ऋषि बड़ा विचित्र मालूम होता है। इसने ऐसी चीज़ें, किरीट और रत्नहार पहिन रखी हैं जो ऋषि नहीं पहिनते। मेरे हाथ मारा गया। पर मुझ पर क्रुद्ध होने के स्थान पर मुझ पर कृपा करके गया है।"

सुमनाक के पास से लिए हुए किरीट और रत्नहार को, विदस्यु ने स्वयं पहिन

लिया। उसको पहिनकर, उसे लगा जैसे उसमें और भी बल आ गया हो।

कुछ समय बीत गया। इन्द्र को, जब सुमनाक का स्वर न सुनाई दिया, तो वह चिन्तित होने लगा। उसके लिए उसने सारे जंगल छान डाले। एक साल बाद उसे विदस्यु दिखाई दिया। सुमनाक को दिया हुआ किरीट उसके सिर पर था और रत्नहार गले में।

"यह किरीट और यह रत्नहार तुम्हारे पास कैसे आया? इनको, जिसने दिया है, वह आदमी कहाँ है?" इन्द्र ने विदस्यु से पूछा।

"तुम मुझे देखकर भयभीत न होकर ऐसे प्रश्न कर रहे हो! तुम इस लोक के नहीं मालूम होते हो। तुम कौन हो?" विदस्यु ने पूछा। "मैं इन्द्र हूँ। मैं अपने भक्त सुमनाक को ढूँढ रहा हूँ। उसको जो मैंने किरीट और रत्नहार दिये थे। तुम्हारे पास कैसे आये?" इन्द्र ने पूछा।

"मैं दस्यु हूँ। मेरा नाम विदस्यु है। मैंने तुम्हारे भक्त और मित्र उस ऋषि को मारकर ये ले लिए हैं।" विदस्यु ने कहा।

इन्द्र को उस पर आया हुआ क्रोध आश्चर्य में बदल गया। उसने उसको

कहा—"तुमने यह जानते हुए भी कि मैं कौन हूँ और उस मुनि का मुझ से क्या सम्बन्ध है, साहस करके सच बोला है।"

"इसका कारण वह ऋषि ही है। वह यह सलाह देकर कि हमेशा सच बोलना, मर गया। चूँकि तुमने उसकी बात कही है, इसलिए मुझे यह बात याद हो आयी। सच बोलने का कोई मेरा नियम नहीं है। मैंने कितने ही झूठ बोले हैं। कितनी ही हत्यायें की हैं। परन्तु जब से उस ऋषि ने मरते समय मुझे सलाह दी है तब से मुझे झूठ बोलना कायरता-सी लगती है। इसलिए ही मैंने सच कहा है।" विदस्यु ने कहा।

इन्द्र रोने लगा। यह देख विदस्यु ने चकित होकर पूछा—"क्यों रो रहे हो?"

"मेरे मित्र सुमनाक को मारनेवाले सचमुच तुम नहीं हो, मैं हूँ। तुम निमित्त मात्र हो। यदि मैं किरीट और हार न देता, तो वह न मरता। मुझे तुम पर बिल्कुल क्रोध नहीं है। मैं तुम्हारी सत्यवादिता से सन्तुष्ट हूँ। कोई वर माँगो।" इन्द्र ने कहा।

ऋषि मरते समय चूँकि सच बोलने के लिए कह गया था, इसलिए मैं सच बोल रहा था, यूँ तो मुझ में पाप विमुक्त होने की सी कोई इच्छा नहीं है। यदि तुम्हें वर देना ही है, तो वर दो कि मेरे वंश में ब्रह्मज्ञानी पैदा हो।" विदस्यु ने कहा।

इन्द्र इसके लिए मान गया। इन्द्र की कृपा से विदस्यु के वंश में कधु पैदा हुआ। वह ब्रह्मज्ञानी हुआ। उसको बड़ी कीर्ति मिली।

मित्र से बाज़ी

एक गाँव में गुणाकर और धनाकर नाम के दो युवक रहा करते थे। वे दोनों मित्र थे। उनमें गुणाकर बिल्कुल सीधा था। बाप दादाओं की दी हुई जमीन जायदाद काफ़ी थी, इसलिए वह विवाह करके आराम से पत्नी के साथ रह रहा था।

धनाकर की बात यह न थी। वह सूझ बूझ से धन कमाता, हर किसी से मीठी तरह बात करता, बिना किसी को कष्ट दिये, उनके पैसा ले लेता और इस तरह अपना जीवन निर्वाह करता। उसके दोस्त थे। बराबरी के तौर पर ही उसने गुणाकर से दोस्ती की थी।

धनाकर अपने मित्रों के साथ आकर प्रायः गुणाकर के घर गप्पें मारा करता। उस समय इधर उधर की गप्पों में बाजियाँ भी लगाई जातीं। छोटी छोटी समस्यायें रखी जातीं और जो उनको सुलझा नहीं पाते वे हार जाते। प्रायः हर बार गुणाकर ही हारता।

गुणाकर तो सीधा-सादा था, पर उसकी पत्नी बड़ी तेज थी। उसने अपने पति से कई बार कहा कि धनाकर जैसे आदमी को पास न आने दे। पर गुणाकर उस धनाकर से न आने के लिए कह न पाता था।

एक बार धनाकर ने अच्छी चाल सोची। पाँच दस दोस्तों के सामने उसने गुणाकर से कहा—"हम बच्चों की तरह छोटी छोटी बाजियाँ लगा रहे हैं। आज मैं एक प्रश्न करता हूँ। यदि तुम उसका उत्तर दे सके, तो तुम मेरी सारी सम्पत्ति ले लेना, यदि नहीं दे सके, तो तुम्हारी सारी सम्पत्ति मैं ले लूँगा।"

धनाकर ने पहिले अपना प्रश्न किया। चावल की फसल के लिए गहरा हल चलाना चाहिए, या ऊपर ऊपर?

गुणाकर तो खेतीवाड़ी के बारे में कुछ न जानता था। इसलिए उसने कुछ सोचकर कहा—"गहरा ही हल चलाना चाहिए।"

"गलत, ऊपर ऊपर हल चलाना ही ठीक है। किसी भी किसान से पूछ देखो।" धनाकर ने कहा।

उसके मित्रों ने भी कहा कि गुणाकर का उत्तर गलत था। उन्होंने गुणाकर से कहा—"तुम्हारी सारी जायदाद धनाकर ने जीत ली, तुम भी उससे एक प्रश्न करो।"

गुणाकर ने पूछा—"पान, बेल पर लगता है, या पेड़ पर।"

धनाकर जान बूझकर, हार जाना चाहता था, इसलिए उसने कहा—"पेड़ पर।"

"नहीं, बेल पर, चाहो तो पान के बाग में जाकर देखो।" गुणाकर ने कहा।

"जरूरत नहीं है, धनाकर भी हार गया है।" धनाकर के मित्रों ने कहा। फिर उन्होंने धनाकर से कहा—"चूँकि पहिली बाजी तुम जीत गये थे, इसलिए

वहाँ उपस्थित मित्रों ने कहा—"समस्या देने का तुम अकेले को मौका देना गलत है। गुणाकर को भी समस्या देने का मौका मिलना चाहिये।"

"मेरे प्रश्न करने के बाद, जीतने हारने के बाद, वह भी मुझ से प्रश्न करके, मुझे हरा सकता है, जीत सकता है। इसमें मुझे कोई एतराज नहीं है।" धनाकर ने कहा।

उसकी यह बात उसको बिल्कुल सीधी-सी लगी। वह बाजी के लिए मान गया।

गुणाकर की सम्पत्ति तुम्हारी हो गई, पर चूँकि गुणाकर दूसरी बाजी में जीता है, तुम्हारी सम्पत्ति गुणाकर की होगी, तुम दोनों अपनी सम्पत्ति का अदला बदला कर लो।"

गुणाकर अन्दर गया। उसने बाजी के बारे में अपनी पत्नी से कहा—"मुझे ये लोग अपनी सारी सम्पत्ति धनाकर के नाम लिख देने के लिए कह रहे हैं।"

"यह बेमतलब की बाजी है, आप उनसे कह दीजिये कि मैं इसे नहीं मानूँगी।" गुणाकर की पत्नी ने कहा।

गुणाकर ने आकर कहा—"यह बाजी नहीं चलेगी, चूँकि मेरी पत्नी कह रही है कि वह इसे नहीं मानेगी।"

"यदि तुमने अपनी सम्पत्ति ठीक तरह न दी, तो अदालत में जाकर ले लेंगे। तुम बाजी में हार गये थे, इसके लिए हम सब गवाह हैं।" धनाकर के मित्रों ने कहा।

उन्होंने जाकर न्यायाधिकारी से, जो कुछ हुआ था, उसके बारे में निवेदन किया। न्यायाधिकारी ने उनको यह कहकर भेज दिया कि कल फैसला देगा।

अगले दिन दोनों तरफ़ के लोग न्यायाधिकारी के सामने उपस्थित हुए। न्यायाधिकारी ने धनाकर से पूछा—"तुम फैसला चाहते हो या अपनी शिकायत वापिस लेते हो!"

"मुझे फैसला ही चाहिये।" धनाकर ने कहा। न्यायाधिकारी ने गुणाकर से यह बताने के लिए कहा कि क्या क्या गुज़रा था। जो कुछ हुआ था, बिना कुछ छुपाये उसने साफ़ साफ़ कह दिया।

"हाँ, चूँकि तुम पहिली बाजी में हार गये थे, तो तुम अपनी सारी सम्पत्ति

धनाकर के नाम लिख दो। यह लो, कागज पर लिखो।" न्यायाधिकारी ने कहा।

गुणाकर करता भी तो क्या करता, उसने अपनी सारी सम्पत्ति धनाकर के नाम लिख दी। न्यायाधिकारी ने उस कागज़ को, धनाकर को देकर कहा—"यह दस्तावेज ठीक लिखा गया है न! चूँकि तुम इसकी बाजी में हार गये थे, इसलिए तुम अपनी सारी सम्पत्ति गुणाकर के नाम लिखो।

"ठीक, यह दस्तावेज़ मैं पहिले ही लिख लाया हूँ।" धनाकर ने न्यायाधिकारी के हाथ एक दस्तावेज़ दिया।

न्यायाधिकारी ने उसे पढ़कर कहा—"नहीं, यह नहीं चलेगा। इसमें तुमने लिखा है कि केवल एक छोटा घर ही है।"

"यही तो मेरी सम्पत्ति है।" धनाकर ने कहा।

"नहीं! जब तुम गुणाकर की बाजी हारे थे, तब तुम गुणाकर की सम्पत्ति के भी मालिक थे। वह तुम्हारी सम्पत्ति थी। इसलिए वह वापिस गुणाकर को मिलनी चाहिए। यदि यह सब एक दस्तावेज़ में लिखना, अगर तुम मुश्किल समझो, तो गुणाकर ने इससे पहिले जो कागज़ तुम्हें लिखकर दिया था, उसे ही वापिस कर दो। तुम्हारी बाजी के मुताबिक गुणाकर की जमीन जायदाद में, तुम्हें एक कानी कौड़ी भी न मिलेगी। परन्तु जो तुम्हारा घर है, वह गुणाकर को मिलेगा। तुम फैसला चाहते थे, इसलिए मैंने फैसला दे दिया है।" न्यायाधिकारी ने कहा।

धनाकर को खूब सज़ा मिली। वह अपना घर गुणाकर को देकर, गाँव छोड़कर चला गया।
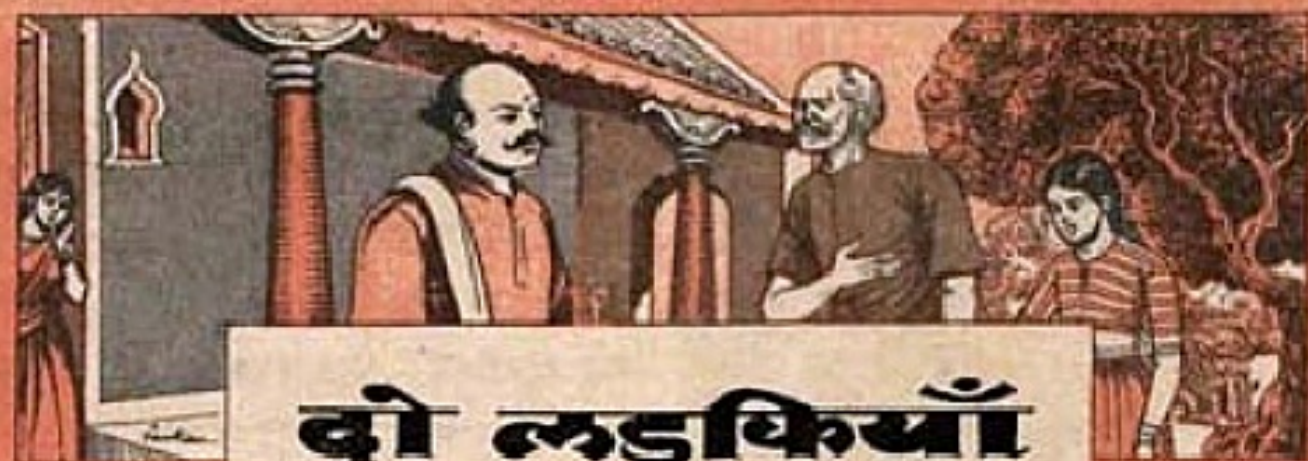
दो लड़कियाँ

सौराष्ट्र देश में एक सम्पन्न व्यक्ति था। वह अपना सब कुछ खो बैठा। अपने लोगों को भी खो बैठा और बुढ़ापे में बिल्कुल गरीब हो गया था। बुढ़ापा था, गरीबी भी थी, इसके साथ सौदामनी नाम की पोती के भरण-पोषण का भार भी उस पर पड़ा; वह उस पोती के साथ एक और जगह गया, वहाँ एक झोंपड़े में रहने लगा। मेहनत करके अपना और अपनी पोती का पेट भरने लगा।

जैसे जैसे दिन गुज़रते गये, उसने सोचा कि वह अपनी कमाई से सौदामिनी को अच्छी तरह नहीं पाल सकेगा। वह बारह वर्ष की लड़की थी। यदि पेट भर खाना भी न मिला, तो वह ठीक तरह बढ़ेगी नहीं और उसकी शादी भी न हो सकेगी। इसलिए उसने सौदामिनी को एक धनी के घर काम पर लगा दिया। उस धनी का नाम विश्वम्भर था। उसने बूढ़े की हालत पर दया करके कहा कि वह उसको अपनी लड़की की तरह देखेगा और उचित सम्बन्ध देखकर, उसका विवाह भी कर देगा।

सौदामिनी चुस्त लड़की थी। घर का काम बिना किसी के कहे करती जाती थी। बाबा कभी आकर उसे देख जाता। दो चार वर्ष बाद वह भी गुज़र गया। फिर सौदामिनी का विश्वम्भर के परिवार के सिवाय, संसार में कोई न रहा।

विश्वम्भर तो अच्छा था। पर उसकी पत्नी बड़ी ईर्ष्यालु थी। उसके एक लड़की थी, जिसका नाम चन्द्रावली था। वह

लड़की भी सौदामिनी की उम्र की थी, पर खूबसूरत न थी। भले ही वह कितने ही गहने पहिने, कितने ही अच्छे कपड़े पहिने, सौदामिनी जितनी सुन्दर न दीख पड़ती थी। यह देख मालकिन उससे जलती थी। यह सोच कि सौदामिनी घर पर तीन बार खाना खाती रही, तो वह उसकी लड़की से और भी सुन्दर हो जायेगी उसने सौदामिनी को गौव्वें चराने का काम दिया।

सौदामिनी सवेरे सवेरे कुछ बासा भात खाकर, गौव्वों को लेकर जंगल चली जाती। गोबर उठाना, गौव्वों को धुलाना, बर्तन माँजना, कपड़े धोना, आदि, काम किया करती थी। इन कामों के कारण वह जल्दी ही कुरूपी हो गई। खाना ठीक न मिलता था, इसलिए वह कमजोर भी हो गई। चीथड़े पहिना करती, सिर पर लगाने के लिए तेल भी न था।

जब सौदामिनी इस तरह हो गई, तब विश्वम्भर की पत्नी को कुछ शान्ति हुई। विश्वम्भर को अपनी पत्नी का व्यवहार बिल्कुल पसन्द न था, पर उसने कुछ भी कहा सुना नहीं। सौदामिनी भी यह अनुभव न कर रही थी कि वह कष्ट झेल रही थी। यही तो उसका जीवन रहा था, एक दिन दुपहर को सौदामिनी ने सब गौव्वों को एक पेड़ के नीचे हाँक दिया और जब वह साथ लाई हुई रोटी का टुकड़ा खाने लगी, तो उसने गौव्वें गिनकर देखा, तो उनमें यमुना नाम की गौ न थी। सौदामिनी घबरा गई, वह खाना भी भूल गई। "यमुना.... यमुना...." चिल्लाती, वह आस पास सब जगह शाम तक घूमती रही। पर यमुना कहीं न दिखाई दी। वह रोती रोती और गौव्वों को हाँककर ले गई। उसने अपनी मालकिन से कहा—"यमुना दिखाई नहीं

दी।" यह सुनते ही विश्वम्भर की पत्नी उबल पड़ी "नहीं दिखाई दी है, तो ढूँढ़कर लाओ। बिना उसको ढूँढ़े घर न आना।"

अन्धेरा होने लगा था, सौदामिनी तब जंगल के लिए निकल पड़ी। वह जंगल में इधर उधर घूमती "यमुना....यमुना" चिल्लाती रही। उसकी पुकार का जवाब कहीं से "अम्बा" आया। सौदामिनी की जान में जान आ गई। जिस तरफ से वह जवाब आया था, जब वह उस तरफ गई तो, उसे एक झोंपड़ी दिखाई दी। झोंपड़ी के चारों ओर घना जंगल था, यमुना नाम की गौ, उस झोंपड़ी के सामने बन्धी थी। सौदामिनी उस गौ के पास जाकर, उसे सहलाकर उससे बात कर रही थी कि अन्दर से आवाज आयी—"गौ के लिए आयी हो! अन्दर आओ।"

सौदामिनी अन्दर गई। उसने देखा कि वहाँ तीन बौने बैठे थे। वे देखने में बड़े बदसूरत थे। अपनी ओर यूँहि सौदामिनी को घूरते देख, एक बौने ने पूछा—"क्या हमें देखकर डर गई?"

"नहीं तो, मैं अपनी गौ को ले जाऊँगी।" सौदामिनी ने कहा।

"वह गौ जंगल में घूम रही थी, वह शेर का शिकार हो जाती, हम उसे बचाकर लाये हैं। तुम अपनी गौ ले जाना, पर जो हमें देखने आते हैं, वे यूँहि नहीं चले जाते। मैं तुम्हारी शक्ल बदल देता हूँ।" एक बौने ने सौदामिनी को अपनी बगल में बिठाया, उसके सिर को अपने हाथ से सवाँरा, तुरत सौदामिनी के बाल झड़ गये। शरीर काला काला हो गया। सौदामिनी भौण्डी हो गई।

बौने ने उसे देखकर हँसते हुए कहा—"अब देखो, कितनी अच्छी लगती हो।"

एक और बौने ने उससे पूछा—"क्यों, उस विचारी को इतनी भौण्डी बना दिया है!"

"क्यों, तुम मुझ पर नाराज हो, सच बोलो!" बौने ने सौदामिनी से पूछा।

"नहीं, तो, आपने मेरी गौ की रक्षा की थी न!" सौदामिनी ने कहा।

"तो हमें कुछ खाने को दो।" पहिले बौने ने कहा।

तब सौदामिनी को अपनी रोटी याद हो आयी। उसकी पोटली अभी उसके कन्धे पर ही लटक रही थी।

"यह उतनी अच्छी नहीं है।" सौदामिनी ने पोटली खोलकर रोटी निकाली।

"कोई बात नहीं, दो देखें तो, तुम कैसी रोटी खाते हो!" उस बौने ने रोटी ले ली, उसके चार टुकड़े करके, तीन बौनों ने तीन टुकड़े ले लिए और एक टुकड़ा सौदामिनी को दिया।

रोटी खाते हुए बौनों ने कहा—"बहुत अच्छी है, बहुत अच्छी है।"

"हमें! तुमने आज अच्छा भोजन दिया है।" कहते हुए दूसरे बौने ने सौदामिनी का सिर सहारा। तुरत सौदामिनी अप्सरा जैसी हो गई। तीसरे बौने ने सौदामिनी का गला सहलाकर कहा—"कोई एक गाना तो गाओ।"

सौदामिनी ने भी गाना चाहा, तो उसकी आवाज कोकिल की आवाज की तरह बड़ी मधुर हो गई थी। उस जंगल के जानवरों ने भी उसके गाने को बड़े चाव से सुना।

इस तरह बदली हुई सौदामिनी, सवेरा होते ही। अपनी गौ को लेकर, घर चली आयी। उसे देखते ही, मालकिन अंगारे उगलने लगी। जब उसने देखा कि उसकी आवाज बदल गई थी। उसे मालूम हुआ

कि उसे क्या अनुभव हुआ था, तो उसको और भी ईर्ष्या हुई।

उसने अपने पति से कहा—"देखा, उसका भाग्य! कहती है, जंगल में एक झोंपड़ी में बौने हैं। देखिये! रोटी खाकर, कैसे उन्होंने इसका रूप बदल दिया है। अपनी लड़की को वहाँ ले जायेंगे।"

उस दिन रात को उसने खूब अच्छे पकवान तैयार करवाये। अपने पति और लड़की को साथ लेकर, वह जंगल के लिए निकल पड़ी। सौदामिनी ने पहिले ही उनको चिन्ह बता दिये थे। उनको देखते देखते, वे झोंपड़ी के पास पहुँचे। पति-पत्नी कुछ दूरी पर खड़े हो गये। चन्द्रावली पकवान लेकर झोंपड़ी के पास गई। उसने अन्दर झाँका, उसने दिये की रोशनी में तीन बौनों को देखा। जब उन्होंने अन्दर बुलाया, तो चन्द्रावली अन्दर गई।

"क्या कल आयी हुई लड़की से हमारी बात जानकर, हमारे पास आयी हो?" एक बौने ने पूछा।

"हाँ, मैं उससे भी बढ़िया पकवान लायी हूँ। तुम मुझे उससे भी अधिक सुन्दर बनाओ।" चन्द्रावली ने कहा।

"यदि नया रूप पाना है, तो जो रूप है, उसे मिटाना होगा। उस लड़की को बदलने का काम मैंने ही शुरु किया था, तो बैठो।" पहिले बौने ने चन्द्रावली का सिर सहलाया। तुरत उसके बाल झड़ गये, चमड़ा काला पड़ गया।

चन्द्रावली उस परिवर्तन को देखकर घबरा गई और रोने लगी। बौनों को डाँट डपटकर वह अपने माँ बाप के पास भाग आयी। बौनों ने चन्द्रावली की लायी हुई पकवानों की पोटली इस तरह फेंकी कि वह उसके माँ बाप के सामने गिरी।

माँ बाप अपनी लड़की के विकृत रूप को देखकर बड़े दुखी हुए। "उस सौदामिनी ने झूट बोलकर हमें धोखा दिया है।" विश्वम्भर की पत्नी ने कहा।

वे घर आ गये। विश्वम्भर की पत्नी ने सौदामिनी से कहा—"तुम अब हमारे घर में नहीं रह सकती। तुम अपनी शक्ल हमें न दिखाओ, चली जाओ।"

उस रात के समय कहाँ जाया जाय, सौदामिनी न जान सकी। वह पशुशाला में जाकर एक कोने में बैठ गई।

माँ बाप के सोते ही, चन्द्रावली धीमे से उठकर बाहर चली आयी। उसने निश्चय कर लिया, उस भयंकर रूप को किसी के देखने से तो यही अच्छा था, कि आत्महत्या कर ली जाये।

चन्द्रावली को देखकर, सौदामिनी पशुशाला में से बाहर आयी। उससे पूछा—"कहाँ जा रही हो!"

"मैं इस रूप में जीवित नहीं रह सकती। आत्महत्या कर लूँगी, तुम जोर से बात न करो। माताजी और पिताजी उठ आयेंगे।" चन्द्रावली ने कहा।

कि उसे क्या अनुभव हुआ था, तो उसको और भी ईर्ष्या हुई।

उसने अपने पति से कहा—"देखा, उसका भाग्य! कहती है, जंगल में एक झोंपड़ी में बौने हैं। देखिये! रोटी खाकर, कैसे उन्होंने इसका रूप बदल दिया है। अपनी लड़की को वहाँ ले जायेंगे।"

उस दिन रात को उसने खूब अच्छे पकवान तैयार करवाये। अपने पति और लड़की को साथ लेकर, वह जंगल के लिए निकल पड़ी। सौदामिनी ने पहिले ही उनको चिन्ह बता दिये थे। उनको देखते देखते, वे झोंपड़ी के पास पहुँचे। पति-पत्नी कुछ दूरी पर खड़े हो गये। चन्द्रावली पकवान लेकर झोंपड़ी के पास गई। उसने अन्दर झाँका, उसने दिये की रोशनी में तीन बौनों को देखा। जब उन्होंने अन्दर बुलाया, तो चन्द्रावली अन्दर गई।

"क्या कल आयी हुई लड़की से हमारी बात जानकर, हमारे पास आयी हो!" एक बौने ने पूछा।

"हाँ, मैं उससे भी बढ़िया पकवान लायी हूँ। तुम मुझे उससे भी अधिक सुन्दर बनाओ।" चन्द्रावली ने कहा।

माँ बाप अपनी लड़की के विकृत रूप को देखकर बड़े दुखी हुए। "उस सौदामिनी ने झूट बोलकर हमें धोखा दिया है।" विश्वम्भर की पत्नी ने कहा।

वे घर आ गये। विश्वम्भर की पत्नी ने सौदामिनी से कहा—"तुम अब हमारे घर में नहीं रह सकती। तुम अपनी शक्ल हमें न दिखाओ, चली जाओ।"

उस रात के समय कहाँ जाया जाय, सौदामिनी न जान सकी। वह पशुशाला में जाकर एक कोने में बैठ गई।

"यदि नया रूप पाना है, तो जो रूप है, उसे मिटाना होगा। उस लड़की को बदलने का काम मैंने ही शुरु किया था, तो बैठो।" पहिले बौने ने चन्द्रावली का सिर सहलाया। तुरत उसके बाल झड़ गये, चमड़ा काला पड़ गया।

चन्द्रावली उस परिवर्तन को देखकर घबरा गई और रोने लगी। बौनों को डाँट डपटकर वह अपने माँ बाप के पास भाग आयी। बौनों ने चन्द्रावली की लायी हुई पकवानों की पोटली इस तरह फेंकी कि वह उसके माँ बाप के सामने गिरी।

माँ बाप के सोते ही, चन्द्रावली धीमे से उठकर बाहर चली आयी। उसने निश्चय कर लिया, उस भयंकर रूप को किसी के देखने से तो यही अच्छा था, कि आत्महत्या कर ली जाये।

चन्द्रावली को देखकर, सौदामिनी पशुशाला में से बाहर आयी। उससे पूछा—"कहाँ जा रही हो!"

"मैं इस रूप में जीवित नहीं रह सकती। आत्महत्या कर लूँगी, तुम ज़ोर से बात न करो। माताजी और पिताजी उठ आयेंगे।" चन्द्रावली ने कहा।

"तुम्हारा इस तरह हो जाना, जितना तुम्हारे लिए अपमानजनक है उतना मेरे लिए भी है। यदि मरना ही है, तो चलो। दोनों मर जायें, चलो पहिले उन बौनों के पास हो आयें।" सौदामिनी ने कहा।

झोंपड़ी में बौने दीप जलाकर बैठे थे। सौदामिनी ने उनसे कहा—"मेरी तरह इस लड़की को भी सुन्दर बनाओ। यदि यह सम्भव न हो, तो हम दोनों को मार दो।"

"तुम्हारी तरह इस लड़की ने हमारा विश्वास न किया और भाग गई। सोचा होगा, कि हम खाने के लालची थे। पगली कहीं की। तुम्हारा लिहाज करके हम इस लड़की को भी अच्छा रूप और अच्छी आवाज दे रहे हैं। कहकर दूसरे बौने ने चन्द्रावली का सिर सहाला। उसके सौन्दर्य के अनुकूल उसने वस्त्र दिये। तीसरे बौने ने उसके कण्ठ को सहालकर कहा—"अब दोनों मिलकर गाओ।"

सौदामिनी और चन्द्रावली ने खूब गाकर, बौनों को सन्तुष्ट किया। सवेरा होते होते, वे घर चले आये।

घर आकर चन्द्रावली ने अपनी माता से सौदामिनी ने जो उपकार किया था, उसके बारे में बताया। उसने अपनी ईर्ष्यालु प्रकृति छोड़ दी, सौदामिनी को भी अपनी लड़की की तरह देखने लगी।

जब वे रुपवती हो गईं, तो विश्वम्भर ने एक साथ अच्छे वर खोजकर उनका वैभव के साथ विवाह कर दिया। इस तरह जो वचन उसने सौदामिनी के बाबा को दिया था, वह निभाया।

भाग्य बल

मगध साम्राटों में बीरसेन भी एक था। उसने बहुत-से युद्ध करके साम्राज्य को विस्तृत किया। इसलिए दूर दूर से कवि आते। उसके शौर्य और साहस की प्रशंसा में कवितायें लिखते और उनको सुनकर उससे ईनाम पाते।

एक बार पांचाल देश से विष्णुशर्मा नाम का पंडित मगध देश आया। एक राज कर्मचारी ने विष्णुशर्मा को अपने घर ठहराया। उसे वह दरबार में ले गया। यह जानकर कि विष्णुशर्मा बड़ा पंडित था, राजा ने सभा में उसको अच्छा आसन दिया।

प्रति रोज की तरह उस रोज भी कवियों ने आकर, राजा की प्रशंसा में कवितायें सुनाईं। ताकि विष्णुशर्मा उसकी प्रशंसा करे राजा ने कवियों को खूब खूब ईनाम दिये। विष्णुशर्मा को, जो यह सब देख रहा था, राजा का यह कार्य बिल्कुल न जँचा। उसने भरे दरबार में खड़े होकर यह श्लोक सुनाया।

"येन यत्रैव भोक्तव्यं,
सुखं व दुःखमेववा
स तत्र बध्वा रज्जैव,
बलाद्दैवेन नीयते।"

(जिसको जहाँ सुख व दुख अनुभव करना होता है। उसे भाग्य वहाँ मानों रस्सी बाँधकर ले जाता है।)

इस श्लोक में कई राजा की प्रशंसा न थी। थोड़ा व्यंग्य अवश्य था। इसलिए सब ने सोचा कि राजा क्रुद्ध होंगे। पर राजा ने मन्त्री से यों कहा—"जैसे

इसका आमोदन कर रहा हो। इस पंडित को अलग ईनाम दिल्वाइये।"

मन्त्री ने एक कागज़ पर कुछ लिखकर राजा को दिखाया। राजा ने उसको जानकर, अपनी मुद्रिका उस पर लगा दी। कागज़ मोड़कर उस पर सील लगाकर, विष्णुशर्मा को दे दिया।

मन्त्री ने विष्णुशर्मा से कहा—"इसे ले जाकर, कोशाधिकारी को दीजिये। आपको ईनाम मिलेगा।"

सभा के बाद विष्णुशर्मा से, जिसने आतिथ्य दिया था उस राजकर्मचारी ने कहा—"आपको जो कुछ ईनाम मिला है, मैं आसानी से ले आऊँगा। चूँकि मैं दरबार में काम करता हूँ, इसलिए यह काम मेरे लिए आसान है। आप जैसो के लिए कठिन है। आप सीधे घर जाइये और आराम कीजिये।" असली बात यह थी कि वह राजकर्मचारी उस ईनाम में अपना हिस्सा लेना चाहता था। यह सब राजकर्मचारी कर रहे थे। इसलिए ज्योंहि पता लगता कि नगर में कोई प्रतिष्ठित व्यक्ति आया था वे उसको अपने घर ले जाते और उसके रहने बहने का प्रबन्ध करते।

राजकर्मचारी, मन्त्री द्वारा विष्णुशर्मा को दिये गये कागज़ को लेकर कोशाधिकारी के पास आया। उस कागज़ पर यह लिखा था—"इस कागज़ को लानेवाले को तुरत कैद में डाल दो और कल सवेरा होने से पहिले उसका सिर कटवाने की व्यवस्था की जाये। सब बिना किसी को मालूम हुए हो जाना चाहिए।"

उस कर्मचारी को तुरत पकड़ लिया गया और कारागार में डाल दिया।

अगले दिन सवेरे राजा स्वयं कैदी के पास आया। "तुम अपने श्लोक के बारे

में क्या कहते हो!" वह "कैद में पड़े" विष्णुशर्मा से पूछकर उसका अपमान करना चाहता था। परन्तु कैद में विष्णुशर्मा नहीं था, पर उसका कर्मचारी ही था। राजा ने पूछा—"यह क्या है?" उस कर्मचारी ने बिना कुछ छुपाये सब कुछ बता दिया।

"जैसी तुम्हारी बेवकूफ़ी थी वैसा ही हुआ। तुम घर जाओ। उस विष्णुशर्मा को यह कहकर यहाँ लाओ कि मैं उसको आतिथ्य दूँगा।" राजा ने कहा।

राजकर्मचारी ने घर जाकर विष्णुशर्मा से कहा—"मैंने सारी रात राजा के महल में ही काट दी।" उसे उसने राजा के अतिथि होने के लिए भेज दिया।

विष्णुशर्मा बिल्कुल न जानता था कि राजा उस पर क्रुद्ध था। वह शाम तक राजा के साथ रहा। फिर राजा विष्णुशर्मा और कुछ लोगों को साथ लेकर वन में टहलने गया। राजा निर्जन प्रदेश में विष्णुशर्मा को मरवा देना चाहता था। वे कुछ दूर वन में गये थे कि राजा के घोड़े के सामने एक साँप फुँकारता हुआ आया। घोड़ा डर गया और पिछले पाँवों पर खड़ा हो गया। साँप बचकर भाग गया। राजा घोड़े पर से गिर पड़ा और उसको चोट लगी। सोचा एक था और हुआ कुछ और। राजा के नौकर जैसे तैसे राजमहल ले गये। राजा ने विष्णुशर्मा से फिर वह श्लोक सुनाने के लिए कहा। राजा ने, इतने गम्भीर सत्य के कहने के कारण विष्णुशर्मा को बहुत-सा ईनाम दिया और उसे भेज दिया। उसके बाद से जो कोई उसकी प्रशंसा करता, कविता सुनाता तो वह उनका सम्मान न करता।

पत्थरों का व्यापार

एक बार पन्नालाल तीन चार कोस दूर अपने एक दूर के रिश्तेदार के घर गया, भोजन का समय था, घर का आदमी भोजन के सामने बैठकर चिल्लाया—"मरे भाई मरे" वह झुँझला रहा था कि हर रोज उसकी पत्नी रोड़े पत्थरवाले चावल उसे खिला रही थी। पन्नालाल को देखते ही बन्धुओं ने उसे भी भोजन परोसा। वह एक कौर निगलता और साथ पत्थर भी। उसने उस स्त्री से पूछा—"चावल में इतने पत्थर कहाँ से आते हैं!"

"क्या बताऊँ! इस पठार में चावल तो पैदा नहीं होता, बस, दुकान में ही खरीदना होता है। ये पत्थर दीखते भी नहीं है कि चुन लिए जायें। रंग भी चावलों का-सा होता है। चावल की क्या बात है, हर दाल में, हर चीज़ में, उसी रंग के पत्थर हैं।" उस स्त्री ने कहा।

घरवाले ने कहा—"अगर दुकान से लाई गई चीज़ को ठीक न करना आये, तो और क्या होगा!"

पन्नालाल ने सोचा कि पता लगाना है, आखिर यह पत्थरों की यह बात है क्या! वह उस दुकान में गया, जहाँ उसके रिश्तेदार चीज़ें खरीदते थे। उसने उससे पूछा—"सुनता हूँ, हर चीज़ में जो तुम्हारे यहाँ से खरीदी जाती है, पत्थर हैं।"

जैसा माल आता है, वैसा ही बेच देता हूँ। कस्बे में हर किसी की दुकान में, थोक आढ़ती दानालाल के यहाँ से ही हर चीज़ आती है। उनसे पूछकर मालूम कर लो।" दुकानदार ने कहा।

रामचन्द्र

पन्नालाल ने दानालाल से पूछा—"आप जो दुकानदारों को चावल दे रहे हैं, उसमें पत्थर ही पत्थर हैं।"

"अरे भाई, मैं क्या चावल पैदा करता हूँ! मैं तो किसानों से चावल खरीदता हूँ। जिन पत्थरों की बात तुम कर रहे हो, उनके बारे में उनसे जाना जा सकता है।" दानालाल ने कहा। पन्नालाल उस गाँव में गया, जहाँ धान पैदा किया जाता था, वहाँ उसने किसानों से पत्थरों के बारे में पूछा।

"क्या भाई, हम क्या पहाड़ों पर चावल पैदा कर रहे हैं! हमारे चावलों में कहीं मिट्टी तो आ सकती है, पर पत्थर कहाँ से आयेंगे?" किसानों ने कहा।

एक बूढ़े किसान ने पन्नालाल को अलग ले जाकर कहा—"जब तक दानालाल को जान नहीं लेते, तब तक तुम पत्थरों के बारे में नहीं जान सकोगे। इस दानालाल ने एक एक कमरे में, तरह तरह के पत्थर जमा कर रखे हैं। हर माल में, दो तीन फीसदी पत्थर मिलाता रहता है। इस तरह उसे काफ़ी मुनाफ़ा होता है। वह डराने धमकाने से डरनेवाला नहीं है, उसे तो रँगे हाथ पकड़ना चाहिए। जब घर में सब सो जाते हैं, तो आधी रात तक बैठा बैठा वह यह पत्थर मिलाने का काम ही करता है।"

पन्नालाल उस दिन रात को दानालाल के घर की ओर गया, वह उस कमरे के पास गया, जिसके बारे में बूढ़े किसान ने बताया था। एक खिड़की पर चढ़ गया उसके किवाड़ों में से अन्दर देखने लगा। दानालाल पत्थर तोलकर, बोरे के हिसाब से चावलों में मिला रहा था। "दानालाल जी, मत मिलाइये। लोग मर जायेंगे। किवाड़ तो खोलिये।" ज़ोर से चिल्लाया।

दानालाल ओर से चिल्लाया—"अरे चोरी करने आये हो!"

"चोरी करने आता, तो क्या तुम्हें बुलाता! किवाड़ खोलिये, तुम से एक जरूरी बात करनी है।" पन्नालाल ने कहा।

दानालाल कुछ देर हिचकिचाया। यह डरकर कि अगर उसने किवाड़ न खोले, तो चिल्लाकर वह सारे शहर को उठा देगा, उसने किवाड़ खोले। पन्नालाल को देखकर कहा—"तो आप हैं, मैंने सोचा था कि कोई और है, आइये।"

फिर दानालाल ने कहा—"आप इस व्यापार में दखल न दीजिये। यह इस व्यापार का रहस्य है। इसमें कितने ही झूट, धोखे और मिलावट आदि होते हैं। जब तक वह नहीं किया जाता, तब तक व्यापार में लाभ नहीं होता। कितने ही दान, धर्म भी तो करता हूँ। यदि फ़ायदा ही न हो, तो वह सब कैसे कर सकता हूँ!"

"तो एक काम कीजिए। इन पत्थरों के मिलाने से आपको जितना फ़ायदा होता है, उतना मैं दे दूँगा। यह काम छोड़ दीजिये।" पन्नालाल ने कहा।

दानालाल ने चकित होकर पूछा—"इससे आपका क्या लाभ?"

"मेरा लाभ मुझे भगवान देंगे। आप बताइये आपको कितना लाभ चाहिए। मैं वह सारा लाभ आपको कल लाकर दे दूँगा।" पन्नालाल ने कहा।

दानालाल को यह सब मजाक-सा लगा। उसने पन्नालाल से कहा—"पाँच सौ बोरे चावल हैं। पचास बोरों में अगर एक बोरा पत्थर मिलाया गया, तो मुझे दस बोरों का फ़ायदा होता है और वह इतना होता है।

अगले दिन पन्नालाल ने जितना उसके पास पैसा था, उसे देखा। जब उसे थोड़ा कम पाया, तो किसी से उधार लेकर वह सब ले जाकर, उसने दानालाल को दिया—"यह रहा, आपका फायदा देखिये। लोगों को जरा अच्छा माल ही दीजिये।" यह कहकर वह चला गया। "यह तो कोई सोने का चिड़ा मालूम होता है। पगला है, जरूर कोई न कोई इसका सब कुछ हथिया कर रहेगा।" दानालाल ने सोचा।

कुछ दिनों बाद पन्नालाल फिर उस गाँव में आया। बन्धुओं के घर जाकर उसने पूछा—"अब तो चावल वगैरह ठीक मिल रहे हैं न?"

"क्या अच्छे! बस उसके बारे में न पूछो। शायद हमारे कष्ट कभी न दूर होंगे।" उसके बन्धुओं ने कहा।

पन्नालाल सीधे दानालाल के घर गया। दानालाल के घर नई नई बहू आयी थी। इसलिए, वह गाँववालों को दावत दे रहा था। उसने पन्नालाल को देखा और पास आकर उससे कहा—"आइये, भोजन के लिए उठिये।" "भोजन का क्या है! मुझे आप से एक बात पूछनी है।" कहते

हुए दानालाल को अलग बुलाया। उससे कहा—"गाँववाले कह रहे हैं कि अब भी चावलों में पत्थर आ रहे हैं। इसका क्या कारण है?"

"आप भी कितने नादान हैं। जब से मैंने आपको वचन दिया था, तब से वैसा काम नहीं किया है। लेकिन मैंने अगर मिलावट छोड़ी है, तो ये छोटे मोटे दुकानदार छोड़ें तब न!" दानालाल ने कहा।

"तो आप अपना सारा माल दुकानदारों को न बेचकर, मुझे बेचिये। मैं सबको दे दूँगा।" पन्नालाल ने कहा।

दानालाल को अचरज हो रहा था कि पन्नालाल कितना ज़िद्दी था। "खैर यह बात बाद में देखेंगे, पहिले भोजन के लिए उठिये।" उसने कहा।

तब तक कुछ लोग खा चुके थे। औरों के साथ पन्नालाल भी खाने के लिए बैठा। मुख में कौर रखते ही चिल्लाया—"अरे मरा...."

उसी हालत में और लोग भी थे। उन्होंने कहा—"अरे भाई यह चावल तो नहीं खाया जा सकता।" वे भी पत्तल छोड़कर, उठ गये। दानालाल को रोना-सा आ गया।

हुआ यह था, पहिले लोगों को तो अच्छा चावल परोसा गया था। पर चावल काफ़ी न था और रसोइया स्टोर में गया और उन चावलों को ले आया, जिनमें पत्थर मिलाये गये थे। उन्हें उसने पका भी दिया।

जब बन्धुओं ने पूछा कि चावलों में पत्थर क्यों आये थे, तो रसोइया उनको उस कमरे में ले गया जहाँ से वह चावल लाया था। वहाँ उन्होंने देखा कि चावल के बोरों में ऊपर पत्थर मिले हुए थे और वहाँ रंग रंग के पत्थर थे। दानालाल के धोखे के बारे में हर कोई जान गया।

परन्तु पन्नालाल ने दानालाल से कहा—"दानालाल जी आपने जो वचन दिया था, उसे आपने निभाया है। इसका मुझे बड़ा सन्तोष है। चूँकि आप घर में जिन चावलों का इस्तेमाल कर रहे हैं, वही बाहर बेच भी रहे हैं।"

यह बात दानालाल को काँटे की तरह चुभी। वह पन्नालाल को अन्दर ले गया और उसे पैसों की थैली देते हुए कहा—"यह लो अपना पैसा मैंने तो आपको परखने के लिए इसे लिया था, नहीं तो मुझे पैसे की क्या जरूरत है! दस दिन बाद आप ही देखिये कि मैं कैसे चावल बेच रहा हूँ। आप खुद ही जान जायेंगे।"

पन्नालाल ने जो उधार लिया था, वह उसने दे दिया। वह उस गाँव से चला गया। फिर दानालाल ने मिलावट करना छोड़ दिया। गाँववाले आराम से खाने पीने लगे।

युद्धकाण्ड

हनुमान के यह कहने पर कि विभीषण राज्य पाने की इच्छा से आया था, राम ने भी अपना अभिप्राय यों व्यक्त किया—"यह विभीषण भले ही कितना दुष्ट हो, पर वह मेरी शरण में आया है, इसलिए मैं इसको नहीं छोड़ सकता। सज्जन आश्रितों को नहीं छोड़ते।"

सुग्रीव ने यह न माना। उसने कहा—"माना यह अच्छा ही है, पर इससे हमारा क्या लाभ है! इसको हमारे पास नहीं आने देना चाहिए। वह कृतघ्न, जो भाई को छोड़ आया है, क्या विश्वास है कि हमारे साथ रहेगा!"

राजाओं में एक धर्म है। एक वंश के राजा भी अड़ोस-पड़ोस के राजाओं की तरह हैं। मौका मिलते ही वे भी आक्रमण कर बैठते हैं। इसलिए योग्य राजा भी, अपने वंश के बलवान राजाओं का विश्वास नहीं करते। रावण इसका विश्वास नहीं कर सका। इसलिए यह हमारे द्वारा राज्य पाने का प्रयत्न कर रहा है। यह हमें नहीं छोड़ेगा।" राम ने कहा।

फिर भी सुग्रीव का अभिप्राय नहीं बदला। "इसमें सन्देह नहीं है कि रावण ने इसको अकेला भेजा है। आज या कल, तुम्हें या लक्ष्मण को मारकर रहेगा।
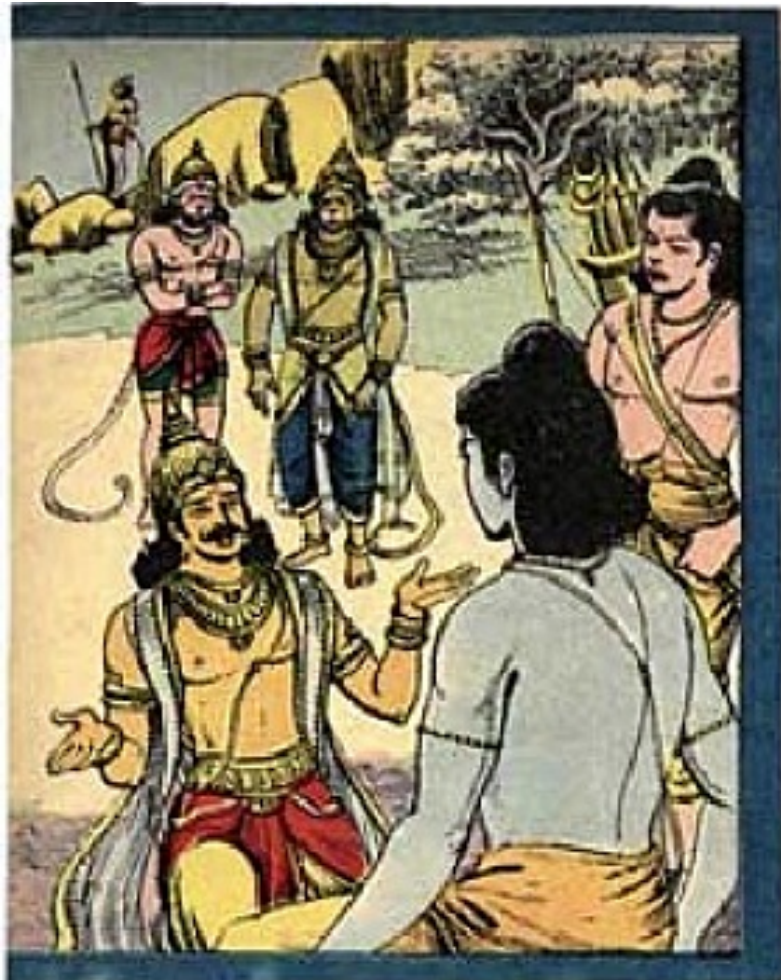
हो सकता है कि सभी को मार दे, दुष्ट रावण के भाई का कैसे विश्वास किया जाये !"

"सुग्रीव, मान भी लिया कि वह दुष्ट है, पर वह मेरा क्या बिगाड़ सकता है ! अगर वह रावण भी हो और शरण में आया हो, तो भी उसे नहीं छोड़ूँगा। शरणार्थी की रक्षा के लिए प्राण भी दे देने चाहिए। इसलिए तुम तुरत उसको ले आओ।" राम ने सुग्रीव से कहा।

यह सुन, सुग्रीव का मन भी बदल गया। वह विभीषण के पास गया। विभीषण को राम के पास ले गया।

उसने राम के पाँव पड़कर कहा—"मैं रावण का छोटा भाई हूँ। उसके द्वारा अपमानित हो आपकी शरण में आया हूँ। मैं अपने मित्र और सर्वस्व को लंका में छोड़कर यहाँ आया हूँ। अब मेरा सारा जीवन, सुख और राज्य आपके ही हाथों में है।"

राम ने विभीषण को आश्वासन देते हुए पूछा—"राक्षसों की शक्ति के बारे में ठीक-ठीक बताओ। लंका की स्थिति के बारे में जानकारी दो।"

तब विभीषण ने इस प्रकार कहा—"रावण ने ब्रह्मा से वर पा रखा है कि वह किसी राक्षस, गन्धर्व या प्राणी से नहीं मारा जा सकता। रावण का छोटा भाई और मेरा बड़ा भाई कुम्भकर्ण बहुत बलवान है, युद्ध में इन्द्र के समान है। रावण के सेनापति प्रहस्त ने कुबेर के सेनापति मणिभद्र को जीत रखा है। हनुमान ने बारे में बता ही दिया होगा। रावण के लड़के इन्द्रजित को भी वर प्राप्त हैं। उसके पास अभेद्य कवच है। वह युद्ध में अदृश्य शत्रु को भी मार सकता है।

महोदर, महापार्श्व, अकंपन आदि रावण के सेनापति, दिक्पालकों के बराबर युद्ध कर सकते हैं। रक्त माँसाहारी, कामरूप राक्षस, लंका में दस हज़ार करोड़ हैं। उनकी सहायता से ही रावण दिक्पालकों को जीत सका।"

विभीषण की ये बातें सुनकर राम ने उससे कहा—"विभीषण! इन सब कार्यों के करनेवाले रावण और उसकी सेना को मारकर, मैं लंका का राज्य तुम्हें दूँगा, तुम विश्वास करो। चाहे, वह पाताल जाये, या नरक या ब्रह्म लोक, मैं उसे जीवित नहीं छोड़ूँगा। मेरे तीनों भाइयों की शपथ, उसे सपरिवार बिना मारे, मैं अयोध्या वापिस नहीं जाऊँगा।

"उस युद्ध में मुझे भी भाग लेने दीजिये। मैं भी यथाशक्ति राक्षसों को मारूँगा, आपकी मदद करूँगा।" विभीषण ने कहा।

राम ने सन्तुष्ट होकर, लक्ष्मण से समुद्र का जल लाकर, विभीषण को लंका के राजा के रूप में अभिषिक्त करने के लिए कहा।

लक्ष्मण ने वानरों के समक्ष विभीषण को लंका का राजा बनाया। वानरों ने राम का जयजयकार किया।

फिर सुग्रीव और हनुमान ने एकान्त में विभीषण से कहा—"हम इतने सारे लोग हैं, हमें नहीं सूझ रहा है कि कैसे समुद्र पार करके लंका पहुँचा जाये। यह हमारे सामने समस्या है। इसका उपाय तुम ही बता सकते हो।"

"राम को समुद्र की शरण माँगनी चाहिए। समुद्र राम के पूर्वज सगर का ऋणी है। इसलिए वह राम के कार्य अवश्य कर

उसने रावण के पास आकर कहा—"वानर भल्लूक सेना एक और समुद्र की तरह, लंका पर आ रही है। उत्तम आयुध लेकर, सीता को खोजते, राम लक्ष्मण समुद्र के तट पर ठहरे हुए हैं। वह सेना जिधर भी देखो, दस योजन तक फैली हुई है। मैं ये सब बातें मोटे तौर पर देखकर आया हूँ। बारीकी से इन बातों का अध्ययन करने के लिए किसी और को भेजना अच्छा है। आप इस पर विचार कीजिए।"

तब रावण ने शुक नामक राक्षस से कहा—"तुम सुग्रीव के पास जाकर ये बातें अच्छी तरह कहो।" फिर उसने यह बताकर, उसे भेज दिया कि उसे क्या कहना था।

शुक ने पक्षी रूप धारण किया। लंका से निकला। समुद्र पार करके, वानर सेना के पास उड़ता-उड़ता पहुँचा। वह धीमे धीमे वहाँ मँड़राने लगा। सुग्रीव आदि से, उसने हवा में से ही कहा।

"वानर राजा सुग्रीव! रावण ने यूँ कहला भेजा है। उन्नत वंश में पैदा हुए हो। महाबलशाली हो। जन्म से मेरे बन्धु के समान हो। निष्कारण मुझ से

देगा।" विभीषण ने उनकी ओर देखते हुए कहा।

सुग्रीव, राम लक्ष्मण के पास गया। विभीषण की बात उन्हें बताकर, उसने राम को समुद्र की आराधना करने के लिए कहा।

राम इसके लिए मान गये—समुद्र तट पर दर्भायें बिछाकर, वे उसके ऊपर आराम से सो गये।

इस बीच शारदूल नामक राक्षस, जो रावण का गुप्तचर था, जहाँ वानरसेना थी, वहाँ आया। वहाँ की परिस्थितियाँ देखकर

विरोध न करो। वाली मेरा मित्र है। तुम मेरे भाई के समान हो। अगर मैं राम की पत्नी लाया हूँ, तो तेरा क्या जाता है! बुद्धिमान हो। खूब सोच लो और किष्किन्धा वापिस चले जाओ। इस मामले में तुम्हारा कोई वास्ता नहीं है। लंका में तो देवता ही नहीं जा सकते हैं, नर और वानरों का तो कहना ही क्या!"

यह सुन वानर, आकाश में उछले और शुक को पकड़कर, आकाश में से ज़मीन पर गिरा दिया। शुक ज़ोर से चिल्लाया—"ओ राम, तुम्हारे वानर मुझे मार रहे हैं। दूतों को नहीं मारना चाहिए। जो कुछ मेरे राजा ने कहने के लिए कहा था, वहीं बातें मैंने कही हैं। मैंने अपनी तरफ़ से कुछ नहीं कहा है।"

राम ने उस पर दया करके, वानरों से कहा—"उसे न मारो।"

शुक घायल पंखों से आकाश में उड़ा, फिर उसने पूछा—"सुग्रीव, रावण से क्या कहूँ!"

"रावण से यह कहना। राक्षस राजा! तुम मेरे मित्र नहीं हो। कभी मेरा उपकार नहीं किया है। मेरे मित्र राम के शत्रु

हो। मेरे शत्रु वालि के मित्र हो। इसलिए अवश्य तुम्हें मारना चाहिए। मैं, तुम्हें सपरिवार मारकर, लंका को भस्मसात् कर दूँगा। तुम्हें राम के आक्रमण से देवता भी नहीं बचा सकते। यह बूढ़े जटायु को मारना नहीं है। न राम लक्ष्मण की अनुपस्थिति में सीता को उड़ा ले जाना है। तुम राम के प्रताप को नहीं जानते।" सुग्रीव ने शुक से कहा।
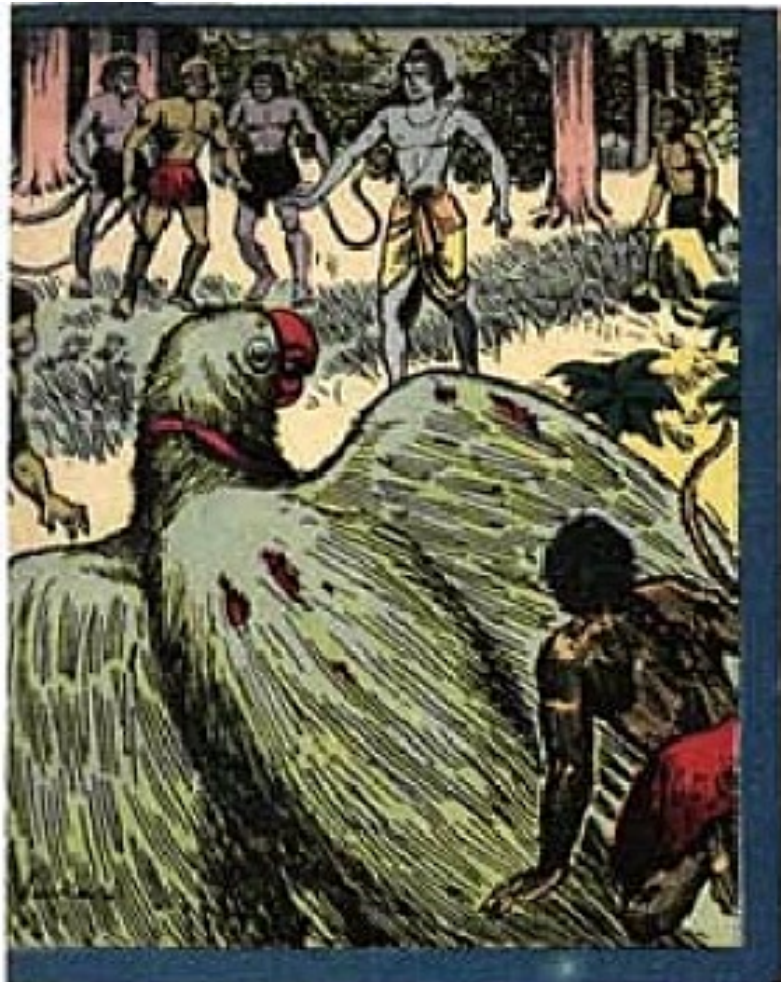
तब अंगद ने सुग्रीव से कहा—"यह तो दूत की तरह नहीं मालूम होता। गुप्तचर मालूम होता है। हमसे बातें करते ही इसने हमारी सारी छावनी देख ली। इसे अभी पकड़ो। लंका मत जाने दो। पकड़ो।"

सुग्रीव की आज्ञा पर वानरों ने शुक को फिर पकड़ लिया। शुक फिर चिल्लाया—"राम मैं दूत हूँ और ये वानर मेरे पंख उखाड़ रहे हैं। आँखें खींच रहे हैं।" वह रोने लगा। राम ने वानरों से कहकर फिर शुक की रक्षा की। फिर वे समुद्र को नमस्कार करके, सिर के नीचे हाथ रखकर, समुद्र के सामने ये लेट गये।

राम ने इस प्रकार तीन रातें काटीं। सारा समय, वे समुद्र का ही ध्यान करते रहे। परन्तु समुद्र का साक्षात्कार नहीं हुआ। क्रुद्ध हो उठे। संसार में अच्छे लोग कमजोर माने जाते हैं। समुद्र ने मुझे भी यही समझ रखा है। राम ने समुद्र को अपनी शक्ति दिखाने का निश्चय किया। फिर उन्होंने लक्ष्मण से कहा—"लक्ष्मण! मेरे धनुष बाण, ज़रा इधर दो। समुद्र को सुखाकर, मैं वानरों के लिए लंका तक पैदल रास्ता बनाऊँगा। समुद्र का जल, मैं देखूँगा कि भूमि पर दूर तक फैल जाये।"

उसने बाण चढ़ाकर छोड़ा। वह जलता समुद्र में घुसा और समुद्र में कोलाहल मच गया। भयंकर तरंगें उठने लगीं। पानी के तह के शंख, मोती, भयंकर समुद्र प्राणी समुद्र की सतह पर उठ आये।

लक्ष्मण ने राम का हाथ पकड़कर कहा—"अब बस करो।" पर राम ने न सुना।

"समुद्र! मैं तुम्हें पाताल तक सुखा दूँगा। तुम्हें रेत ही रेत बना दूँगा। तुम मेरे बल पराक्रम को नहीं जानते। शायद तुम नहीं जानते कि तुम्हारा मैं क्या कर दूँगा।" राम ने उस समुद्र से कहा, जो उसके सामने प्रत्यक्ष नहीं हुआ था।

उसने एक भयंकर बाण निकाला, ब्रह्मास्त्र चढ़ाया—उसे कान तक खींचा। उनके उसे छोड़ने से पहिले ही इतना शोर हुआ, मानों भूमि और आकाश ही फूट पड़े हों। पहाड़ काँप उठे। सब लोकों में अन्धकार छा गया। नदियाँ और सरोवर मिलने लगे। सूर्य, चन्द्रमा और नक्षत्र अपने मार्ग से विचलित हो उठे। आकाश में भयंकर वायुयें बहने लगीं। उनकी गति के कारण बड़े-बड़े पेड़ उखड़ गये। इस उत्पात के कारण, समुद्र का पानी कई योजन पीछे हट गया। समुद्र को पीछा हटता देख, राम ने बाण न छोड़ा।

इतने में समुद्र ऊँची ऊँची तरंगों के बीच में नदियों के साथ समुद्र बाहर आया। उसके शरीर का रंग वैडूर्य का था। लाल मालायें और कपड़े पहिन रखे थे। कई सोने के आभूषण पहिन रखे थे। उसके गले की मोतियों की माला के बीच में कौस्तुभ मणि चमक रही थी।

समुद्र ने राम के पास आकर, पहिले राम का नाम लेकर, उनको नमस्कार

करके कहा—"राम! गहराई मेरे लिए स्वभाविक है। मैं उस गुण को नहीं छोड़ सकता। परन्तु वानर जब समुद्र पार कर रहे होंगे, तो मैं यह कर सकता हूँ कि इस काम में उनके प्राण न जायें।"

"अगर यही बात है, तो इस चढ़ाये हुए बाण का क्या करूँ!" राम ने पूछा।

इस तरफ़ उत्तर में द्रुमकुल्य नामवाला प्रदेश है। वहाँ कुछ भयंकर चोर हैं। मेरा जल पीकर, दुनियाँ-भर के पाप कर रहे हैं। बहुत समय से मैं उनका स्पर्श सहन नहीं कर पा रहा हूँ। तुम अपना बाण उन पर छोड़ो।" समुद्र ने राम से कहा।

उसी प्रकार राम ने अपना बाण द्रुमकुल्य पर उपयोग किया। वह बाण जहाँ बिजली की तरह गिरा, उस स्थल का नाम मरुकान्तार पड़ा। जहाँ बाण भूमि में चुभा, वहाँ पाताल में से जल बाहर आ गया। उस जल का नाम व्रण कूप है और वह हमेशा बहता रहता है। द्रुमकुल्य में रहनेवाले सब चोर मारे गये।

तब समुद्र ने राम से कहा—"तेरी सेना में नल नाम का एक वानरोत्तम है। वह विश्वकर्मा का लड़का है। शिल्प विद्या में पिता से किसी क़दर कम नहीं है। उससे पुल बनवाओ। यह मेरा काम रहा कि वह डूबे न।"

यह कहकर समुद्र अन्तर्धान हो गया। फिर नल ने राम से कहा—"जो समुद्र ने कहा है, वह ठीक ही है। मैं पुल बना सकता हूँ। यह सोचकर कि यह अच्छा है, यदि कोई और मेरे शक्ति-सामर्थ्य के बारे में कहे, मैंने स्वयं कुछ न कहा। अगर आप कहें, तो हम सब वानर मिलकर अभी पुल बनाना शुरु कर देंगे।"

नेहरू की कथा

[२]

१८८९, नवम्बर १४ (मार्गशीर्ष बहुल सप्तमी) अलहाबाद में, मोतीलाल के एक लड़का हुआ। यह ही जवाहरलाल थे। सम्पन्न परिवार का पहिला लड़का था। ग्यारह वर्ष तक, उस दम्पति के बच्चे ही न हुए थे। इसलिए बड़े लाड़ प्यार से बालक जवाहरलाल पाले पोसे गये। पर उनको हम उम्र बच्चों का साथ न मिला। अगर स्कूल जाते तो शायद साथी वगैरह मिलते भी, पर वे स्कूल नहीं भेजे गये। घर में ही अध्यापक, अध्यापिकाओं को रखकर, उनकी शिक्षा का प्रबन्ध किया गया।

जवाहर के साथ रहकर शिक्षा देनेवाली एक अंग्रेज स्त्री थी। मोतीलाल के मित्रों में अंग्रेज भी थे। वे प्रायः मोतीलाल के लिए आया जाया करते। जवाहरलाल इन अंग्रेजों को आदर की दृष्टि से देखते। परन्तु उन अंग्रेजों से वे बहुत असन्तुष्ट थे, जिन्होंने भारत को अपने आधीन कर रखा था, और जो भारतीयों को हीन दृष्टि से देखा करते थे। ऐसे लोगों के बारे में, अक्सर बड़े बुजुर्ग बातें किया करते थे। जवाहरलाल के सम्बन्धियों में, एक थे, जो हमेशा, अंग्रेजों और एन्लो इन्डियन्स से झगड़ा मोल लिया करते थे। प्रायः रेल के सफ़र में ही ये झगड़े अधिक हुआ करते थे। अंग्रेजों के लिए गाड़ी में अलग डिब्बे होते थे और अगर वे दूसरे डब्बों में सवार हो जाते, तो भारतीयों को न आने देते। पार्कों में भी उनके लिए अलग बेन्चें थीं। ऐसी बातें

सुनकर जवाहरलाल नेहरू आग बबूला हो उठते।

जब चार दोस्त मिलकर बातें किया करते, तो मोतीलाल इतने ज़ोर से हँसते कि लगता कि घर की छत ही टूट जायेगी। उनकी हँसी के बारे में अलहाबाद में हर कोई कहा करता। मोतीलाल के शारीरिक बल, धैर्य, बुद्धिमत्ता देख, जवाहरलाल नेहरू गर्व किया करते। बड़े होकर, वे भी उनकी तरह होना चाहते थे।

पिता के प्रति अभिमान के साथ साथ उनमें भय भी था। चूँकि मोतीलाल का क्रोध भी, हंसी की तरह जोरदार होता था। अगर वे कभी किसी पर गुस्सा होते, तो वह काँप उठता। जवाहरलाल कहा करते थे कि बड़े होकर भी उन्होंने किसी में उतना गुस्सा न देखा था।

इस गुस्से के शिकार स्वयं जवाहरलाल नेहरू एक बार हुए। वे अभी पाँच छः वर्ष के ही थे, कि उन्होंने पिता की मेज़ पर दो पेन देखे। यह सोच कि दो कलमों की क्या ज़रूरत थी, उन्होंने एक पेन ले लिया। उस कलम के लिए जब उन्होंने देखा, कि सारा घर छाना जा रहा था, तो वे यह भी न कह पाये कि उन्होंने लिया था। आखिर चोरी पता लग गयी। पिता ने जवाहरलाल को धुन दिया। आखिर उन्होंने माता की शरण ली।

दण्ड दिया था, इसलिए वे अपने पिता पर रुष्ट नहीं हुए। यद्यपि दण्ड अधिक था, पर वह सर्वथा निष्कारण नहीं था। पिता पर भले ही प्रेम और अभिमान हो, पर साथ डर भी था। परन्तु माता से उन्हें कोई डर न था। चाहे वे कुछ भी करें, माता कुछ भी न कहती थीं। शायद वे उन पर कुछ धौंस भी जमाते हों, वे

माता के पास ही अधिक समय व्यतीत करते। ऐसी बातें माता से कहते जो वे पिता से नहीं कह पाते थे। उनका कद छोटा था, छोटी उम्र में ही वह उनके बराबर हो गये थे। वे उनको अपने बराबर का समझते। उनके छोटे छोटे हाथ और पैरों को देखकर वे बड़े खुश होते।

मुबारक अलिसे भी, जिन्होंने मोतीलाल को पढ़ाया था जवाहरलाल काफ़ी हिले हुए थे। १८५७ के गदर में उनके परिवार के पास जो कुछ था, वह चला गया था। अंग्रेज सैनिकों ने उनके कई रिश्तेदारों को मार दिया था। इसके कारण वे बहुत सहिष्णु हो गये थे। वे बच्चों से तो बहुत ही मिल जुलकर रहते थे। जब कभी कोई तकलीफ़ होती, बात होती तो जवाहर भागे भागे इस मुन्शी के पास जाते और उनसे कह देते। वे उनकी गोदी में बैठ अरेबियन नायट्स की कहानियाँ तथा १८५७ की घटनाओं के बारे में उनसे सुना करते। ये मुन्शी काफ़ी दिन जीवित रहे। जवाहरलाल के काफ़ी बड़े होने पर ही वे गुजरे। जवाहरलाल ने अपनी माँ और तायी से रामायण और महाभारत की कहानियाँ सुनीं। उनकी तायी (नन्दलाल की पत्नी) बहुत-सी पौराणिक कथायें सुनाती। धर्म सम्बन्धी कर्मकाण्ड वगैरह सब स्त्रियाँ ही देखा करती थीं। मोतीलाल और उनके भाई के लड़के धर्म आदि के बारे में कभी कभी परिहास ही करते थे। जवाहरलाल कभी कभी तायी और माँ के साथ गंगा में भी नहा आते थे। देवालय देख आते थे। बड़े बड़े सन्यासियों के भी दर्शन कर आते थे। पर इस सब में उनकी कोई विशेष रुचि न थी।

त्यौहार आते। बसन्तोत्सव (होली) आती। एक दूसरे से वे होली खेला करते। दीवाली के दिन वे घर में हजारों दीप जलाकर घर में रखते। कृष्णाष्टमी, रामलीला के त्यौहार होते। रक्षाबन्धन भी एक त्यौहार है। यही नहीं, मुहर्रम और ईद जैसे मुसल्मानी त्यौहारों में भी जवाहर भाग लिया करते। ईद के दिन मुन्शी मिठाई बाँटा करते। काश्मीरी हिन्दुओं के कुछ अपने भी त्यौहार थे, जो हिन्दुओं के नहीं थे। उनमें नवरोज एक था। उस दिन हर कोई नये कपड़े पहिना करता।

परन्तु जवाहरलाल के लिए सबसे बड़ा त्यौहार अपना जन्म दिवस था। इस त्यौहार में वे ही प्रधान व्यक्ति थे। सवेरे ही, उनको गेहुँ आदि खाद्य पदार्थों से तोला जाता और उन चीज़ों को गरीबों में बाँट दिया जाता। फिर उनको नये कपड़े पहिनाये जाते, उपहार दिये जाते। बाद में दावत होती, उनको बस यही दुःख था कि उनका जन्म दिन बहुत लम्बे अर्से बाद ही आता था। वे अक्सर आन्दोलन किया करते कि उनका जन्म दिन और ज्यादह दिन मनाया जाये।

विवाह भी आया करते। दूर जगह सफर पर जाना होता। ऐसी यात्रायें जवाहरलाल को बड़ी भातीं। बच्चे तब मनमानी करते। विवाहवालों के घर कितने ही बच्चे, लड़के, लड़कियाँ मिला करते। तब जवाहर को अकेलापन न काटता। चाहे जितना ही शोर करो, बड़े कुछ न कहते।

(अभी है)

३३. इमाम रिजा का मकबरा

इमाम रिज़ा, जब खलीफा था, तो किसी ने उनको विष देकर मार दिया। उनकी मजार मेशेद में है। लाखों शिया मुसलमान इसे देखने हर साल आते हैं और मनौतियाँ करते हैं। खलीफा हरुन अल रशीद, जो अरेबियन नाइट्स की कहानियों में आता है यहीं दफनाया गया है।

Photo by Anant Desai
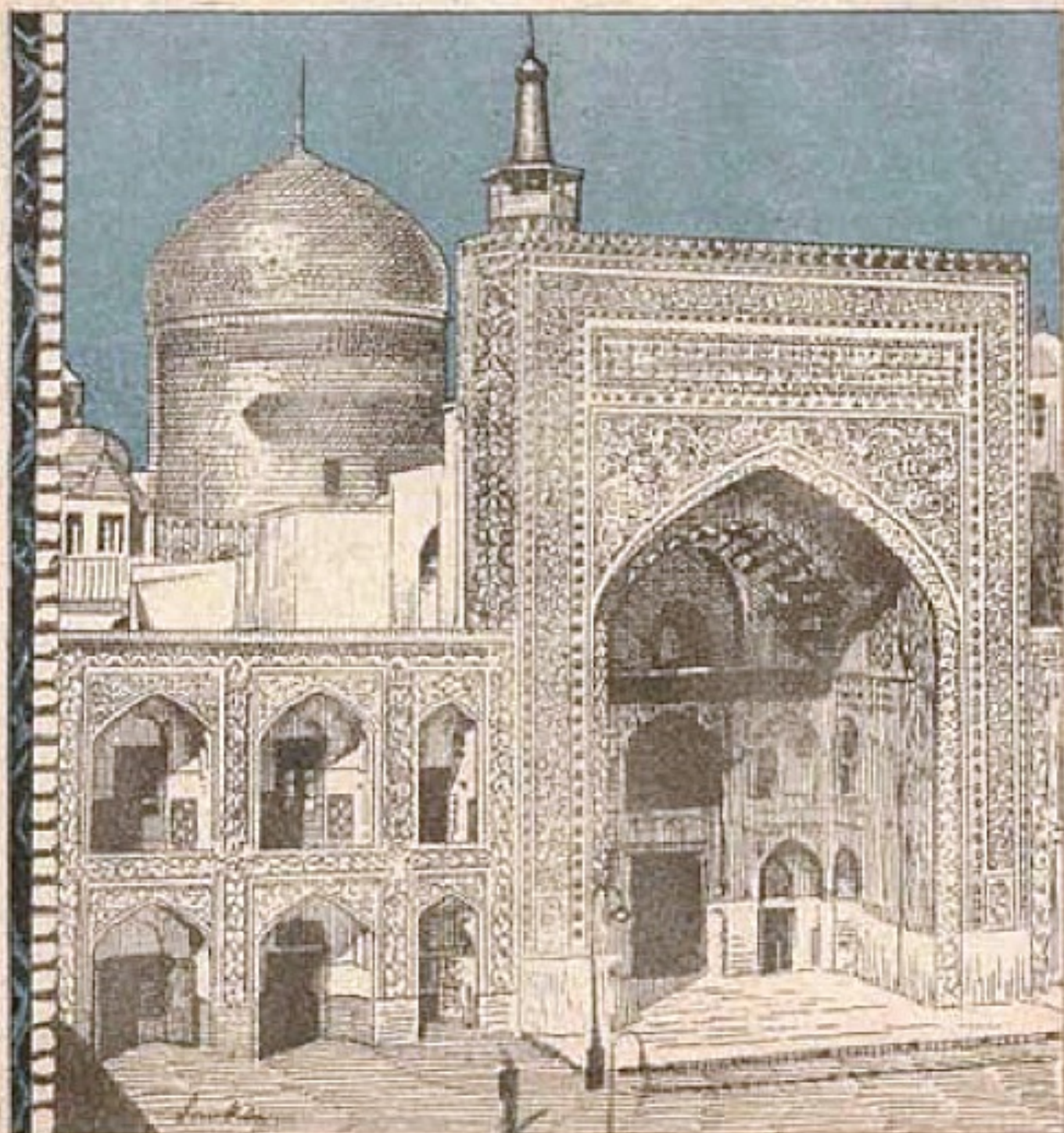
पुरस्कृत
परिचयोक्ति

सर पे कबूतर हाथ में दाना!

प्रेषक:
सतीशकुमार गोयल-दिल्ली

Photo by Anant Desai

पुरस्कृत परिचयोक्ति

कन्धे पे मुर्गा लगता सुहाना !!

प्रेषक: सतीशकुमार गोयल-दिल्ली

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

नवम्बर १९६४ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें !

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख ७ सितम्बर १९६४ के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वड़पलनी, मद्रास-२६

सितम्बर — प्रतियोगिता — फल

सितम्बर के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं।
इनके प्रेषक को १० रुपये का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो: सर पे कबूतर हाथ में दाना!
दूसरा फ़ोटो: कन्धे पे मुर्गा लगता सुहाना!!

प्रेषक: सतीशकुमार गोयल
कमला नगर १६२-डी, दिल्ली-६.

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Private Ltd., and Published by B. VENUGOPAL REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

CHANDAMAMA (Hindi) SEPTEMBER 1964 Regd. No. M. 5452

प्रह्लाद